द्वारिका ......चित्रण

अविनाश डामोर

જય મા મોગલ

लेखक के बारे में

अविनाश ने अपनी स्कूली शिक्षा Excellent माध्यमिक विद्यालय से और उच्च विद्यालय की पढ़ाई महावीर सीनियर स्कूल से पूरी की, बीए इतिहास से ऑनर्स किया था, इतिहास की कहानियों का शौक उन्हें स्कूल के दिनों से ही था।

हर धर्म के पुराणों और उनकी कथाओं को गहरी दिलचस्पी से पढ़ना, समझना और उन पर शोध करना उन्होंने बहुत कम उम्र से ही शुरू कर दिया था।

इतिहास का एक छात्र होने के साथ-साथ वे इतिहास पढ़ाते भी रहे हैं, और अब अपने शोध कार्य को पूरा करने के सफ़र पर हैं।

"द्वारिका चित्रंन " उनकी इसी साधना का परिणाम है—जहाँ इतिहास केवल किताबों का विषय नहीं, बल्कि एक जीया हुआ अनुभव बनकर सामने आता है, वह अभी इतिहास से मास्टर डिग्री कर रहे हैं और वह महाभारत और द्वारिका पर शोध कर रहे हैं,साथ ही वे फिल्म निर्देशन की पढ़ाई भी कर रहे हैं

आभार

मैं उन सभी लोगों का धन्यवाद करना चाहता हूं जिन्होंने मुझे मेरे कार्य को लेकर मुझे हमेशा प्रोत्साहन किया वह मुझे आगे बढ़ाने की प्रेरणा दी अपने पिता शंकर मेरी माता पुष्पा का बहुत आभार जिन्होंने बचपन से लेकर आज तक मेरी हर जरूरत को पूरा किया, मेरे सभी मित्रों का का खूब धन्यवाद कि आपका प्यार हमेशा मेरे लिए हमेशा बढ़ता रहा आप लोगों के साथ कई सारी यादें व कई सारी बातें जीवन में सदा ही मेरे साथ रहेगी मैं अपने विद्यालय के शिक्षकों का धन्यवाद करना चाहता हूं जिन्होंने मुझे हमेशा एक शरारती छात्र होने के बावजूद भी हमेशा मुझ पर अपना प्यार दिखाया मुझे मार्गदर्शन दिया और मेरे छात्रों को जिन्होंने मेरी इतिहास को पढाने की शैली को हमेशा एक अनोखे रूप में देखा और मुझे कम समय में ही इतना प्रेम दिया आप सभी का बहुत धन्यवाद आपके प्रोत्साहन के बिना यह कहानी अधूरी थी...

“समर्पित”

यह पुस्तक मेरे दादाजी हजारी भाई डामोर को समर्पित है जो की किसी समय हेड कांस्टेबल के पद पर थे उन्हीं के कारण मुझे इतिहास में रुचि आने लगी ,उनके साथ की गई बातें उनके साथ बिताए गए पल वह उनके लिए मेरा प्रेम सदैव ही बढ़ता रहेगा , इस किताब का जिक्र मैंने उनसे नहीं किया , मैंने उससे वादा किया था कि एक दिन मैं एक किताब लिखूंगा जिसमें मैं अपनी पहली किताब उन्हें समर्पित करुंगा और आपका नाम लिखूंगा और मुझे खुशी है कि आखिरकार मैंने अपना वादा पूरा किया।
वह इस बात से ही खुश है कि मैं अपना योगदान आने वाला समय इतिहास के क्षेत्र में व्यतीत करूंगा ,
आपके द्वारा दी गई हर राय हर सलाह मेरे लिए जीवन में काफी उपयोगी है, आपके द्वारा सुनाई गई कहानियो ने मेरे जीवन में काफी सारे नई-नई जागरूकता को पैदा किया जो की एक इतिहास प्रेमी के रूप में सामने आया , इसी कारण मेरी पहली पुस्तक आपको समर्पित है..

विषय-सूची

लेखकीय सूचना:

इस पुस्तक में वर्णित ऐतिहासिक तथ्य विभिन्न ग्रंथों, पुराणों और पुरातात्विक शोध पर आधारित हैं। कुछ प्रसंग लेखक की व्यक्तिगत अनुभूति और कल्पनात्मक प्रस्तुति हैं। इसका उद्देश्य किसी आस्था को ठेस पहुँचाना नहीं, बल्कि इतिहास और भावनाओं के बीच संवाद स्थापित करना है।

द्वारिका चित्रंन

1

मिथक के प्रति मेरा विचार

..

कृष्ण—इस नाम को सुनते ही मानो मन में एक अलग ही मोह पैदा हो जाता है। यह केवल एक शब्द नहीं है, बल्कि एक ऐसा अनुभव है, जो आज भी हर कृष्ण प्रेमी के रग-रग में बसता है।

मैं, एक इतिहास का छात्र और शोधकर्ता, हमेशा से महाभारत और श्री कृष्ण की लीलाओं में दिलचस्पी रखता रहा हूँ। मेरे लिए इतिहास केवल पढ़ने का विषय नहीं रहा; मैं उसे समझना, महसूस करना, जीना चाहता हूँ। महाभारत के बाद भी, आज के युग में, वहाँ बहुत सारे अनसुलझे रहस्य हैं—जिन्हें ग्रंथों ने समेट रखा है। सवाल हैं, रहस्य हैं—क्या कृष्ण का अस्तित्व था? क्या द्वारिका वास्तव में थी? या महाभारत सिर्फ एक कथा है?

मेरे मन में हमेशा यही सवाल रहा। क्योंकि अगर आप महाभारत को केवल ग्रंथ या कल्पना मानते हैं, तो सोचिए—इतने कई ग्रंथों को मिलाकर इतनी विशाल कहानी, इतनी विविधता और इतने पात्रों के साथ, लिखी कैसे जा सकती है? यह सवाल मुझे वर्षों से खा रहा था।

और यही कारण था कि मैंने एक यात्रा की शुरुआत की—कहीं दूर, कृष्ण के साम्राज्य द्वारिका की ओर।

कमरे में सुबह का अलार्म बजा। समय था सुबह के 3:40 बजे। धीरे-धीरे कमरे की लाइट जलाई और चारों ओर सजी तस्वीरें और स्मृतियों से भरा माहौल सामने आया। टेबल के पास रखा एक सुंदर सा गिटार, किनारे पर किताबों का ढेर, और बैग में थोड़े कपड़े और किताबें।

जल्दी से नहा-धोकर तैयार होना था, क्योंकि सुबह 5 बजे अहमदाबाद से द्वारिका के लिए बस रवाना हो चुकी थी। आंखें लाल और हल्की सूजी हुई थीं। बैग में एक लाल रंग का छोटा रुमाल लपेटा हुआ था—कुछ यादों और जरूरी सामान के साथ।

सूरज अभी उगा नहीं था, बाहर अंधेरा और ठंडी हवा थी। बस में बैठकर, मैंने इयरफोन लगाया और अपने विचारों में खो गया। यह सफर सिर्फ दूर-दराज़ की यात्रा नहीं, बल्कि खुद को ढूँढने और अपनी पहचान की तलाश का सफर था।

टिकट चेक करते हुए कंडक्टर ने कहा, "साहब, आपका नाम?"

मैंने धीरे से जवाब दिया, "अविनाश।"

बस की सीट पर बैठकर, हल्की ठंडी हवा का अहसास और अपने ख्यालों का संगम—बस यही मेरी यात्रा की शुरुआत थी।

यह सफर न केवल द्वारिका तक जाने वाला था, बल्कि एक भीतरी यात्रा भी थी—जहां मैं अपने भीतर के उस हिस्से को तलाशने वाला था, जिसे शायद मैं लंबे समय से ढूँढ रहा था।

महाभारत के बाद और मथुरा से द्वारिका तक के कृष्ण का स्वरूप, महाराजाधिराज द्वारिकाधीश

के रूप में पूजा जाता है। द्वारिका मंदिर का निर्माण लगभग 200 ईसा पूर्व में हुआ था। यह स्थल भगवान कृष्ण के निवास के ऊपर ही था, जिसे बाद में 16वीं शताब्दी में पुनर्निर्मित किया गया।

कहते हैं, द्वारिका के मुख्य मंदिर की मूर्ति के नेत्र नहीं हैं। मंदिर के पुजारी बताते हैं कि उनके स्वप्न में उन्हें यह अनुभूति होती थी कि पास के कुएँ में एक प्राचीन मूर्ति छिपी हुई है। पर समय से पहले उसे बाहर निकालने पर यह अधूरी रह जाती—जैसा कि हुआ भी।

आज द्वारिका गुजरात के तट पर स्थित है, और यहाँ का द्वारिकाधीश मंदिर अपनी भव्यता और 52 गज की विशाल ध्वजा के लिए प्रसिद्ध है।

52 गज की यह ध्वजा केवल सजावट नहीं है; इसके पीछे गहरी प्रतीकात्मकता और महत्व है:

52 द्वारों का प्रतीक: कहा जाता है कि यह ध्वजा कृष्ण के समय द्वारिका के 52 द्वारों का प्रतिनिधित्व करती है।

52 यादवों का प्रतीक: कुछ मानते हैं कि यह उन 52 यादवों का सम्मान है जिन्होंने द्वारिका पर शासन किया, जिनमें कृष्ण, बलराम, अनिरुद्ध और प्रद्युम्न भी शामिल हैं।

ज्योतिषीय महत्व: कुछ विद्वानों के अनुसार, 52 गज की ध्वजा 12 राशियों, 27 नक्षत्रों, 10 दिशाओं, सूर्य, चंद्रमा और भगवान द्वारकाधीश का प्रतीक है—कुल 52।

परंपरा: यह ध्वजा दिन में पांच बार फहराई जाती है और श्रद्धालुओं को इसका अनुभव पाने के लिए 2-3 साल तक इंतजार करना पड़ता है।

द्वारिका का यह अनुभव केवल एक यात्रा नहीं है, बल्कि इतिहास, संस्कृति, भक्ति और कृष्ण की

अनंत **लीलाओं का संगम** है। हर कदम पर लगता है जैसे आप सिर्फ इतिहास नहीं देख रहे, बल्कि उसे जी रहे हैं।



Figure 1 Dwarika Temple

दिलचस्प बात यह है कि वहां से ढाई सौ से 237 किलोमीटर की दूरी पर सोमनाथ मंदिर स्थित है जो किसी समय एक आपातकालीन राजधानी हुआ करती थी !



Figure 2Somnath Temple

सोमनाथ गुजरात के सौराष्ट्र क्षेत्र के वेरावल, प्रभास पाटन में समुद्र तट के किनारे स्थित एक भव्य मंदिर है। भगवान शिव के 12 पवित्र ज्योतिर्लिंगों में से एक यहीं सोमनाथ में है। सोमनाथ मंदिर का उल्लेख शिव पुराण के अध्याय 13 में भी किया गया है। कई मुस्लिम आक्रमणकारियों और शासकों द्वारा बार-बार नष्ट किए जाने के बाद अतीत में मंदिर का कई बार पुनर्निर्माण किया गया था, विशेष रूप से 11 वीं शताब्दी में महमूद गजनी के हमले से शुरू हुआ था।

सोमनाथ का स्थल त्रिवेणी संगम होने के कारण प्राचीन काल से एक तीर्थ स्थल रहा है: कपिला, हिरण और सरस्वती नामक तीन नदियों का संगम। गुर्जर-प्रतिहार राजा नागभट्ट द्वितीय ने दर्ज किया है कि उन्होंने सौराष्ट्र में तीर्थों का दौरा किया है, जिसमें सोमेश्वर भी शामिल है, जो मंदिर का वैकल्पिक नाम है। 1026 में, भीम प्रथम के

शासनकाल के दौरान, गजनी के तुर्क मुस्लिम शासक महमूद ने सोमनाथ मंदिर पर हमला किया और लूटपाट की, इसके ज्योतिर्लिंग को तोड़ दिया। वह 20 मिलियन दीनार लूटकर ले गया। 1169 में एक शिलालेख के अनुसार, कुमारपाल (जन्म 1143-72) ने सोमनाथ मंदिर का पुनर्निर्माण "उत्कृष्ट पत्थर से किया और इसे रत्नों से जड़ित" किया। उन्होंने एक जर्जर लकड़ी के मंदिर की जगह ले ली।

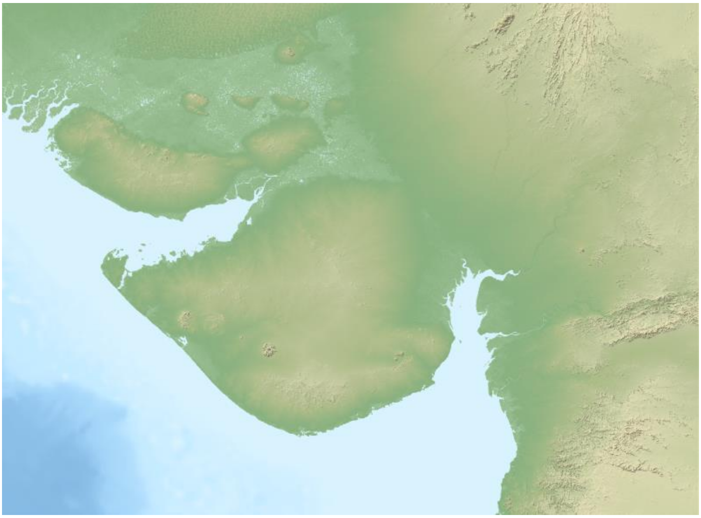


Figure 3 Gujrat Map

1299 में गुजरात पर आक्रमण के दौरान, उलुग खान के नेतृत्व में अलाउद्दीन खिलजी की सेना ने वाघेला राजा कर्ण को हराया और सोमनाथ मंदिर को लूट लिया। मंदिर का पुनर्निर्माण 1308 में सौराष्ट्र के चुडासमा राजा महीपाल प्रथम द्वारा किया खेंगारा ने 1331 और 1351 के बीच किसी समय स्थापित किया था।

1395 में, दिल्ली गया था और लिंगम को उनके बेटे सल्तनत के तहत गुजरात के अंतिम गवर्नर और बाद में गुजरात सल्तनत के संस्थापक जफर खान द्वारा मंदिर को तीसरी बार नष्ट कर दिया गया था।



भारत के लौह पुरुष और उप प्रधान मंत्री वल्लभभाई पटेल 12 नवंबर 1947 को जूनागढ़ आए थे और उस समय उन्होंने सोमनाथ मंदिर के पुनर्निर्माण का आदेश दिया था। तदनुसार, धन इकट्ठा करने और मंदिर के निर्माण की देखरेख के लिए सोमनाथ ट्रस्ट की स्थापना की गई थी। नई संरचना का निर्माण गुजरात में पारंपरिक सोमापुरी मंदिर निर्माताओं द्वारा किया गया था। 11 मई 1951 को भारत के राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने मंदिर का स्थापना समारोह किया।

वर्तमान में ट्रस्ट के अध्यक्ष भारत के प्रधान मंत्री हैं।

मंदिर परिसर में एक मीनार पर संस्कृत में लिखे एक शिलालेख के अनुसार, कोई भी मीनार से दक्षिण दिशा में सीधे रास्ते का अनुसरण करके दक्षिणी ध्रुव तक बिना किसी बाधा के यात्रा कर सकता है।

सुन्दर तथ्य यह है कि सोमनाथ मंदिर का स्थान सरस्वती नदी के मुहाने से तीन मील से थोड़ा कम पश्चिम में था। यह मंदिर हिंद महासागर के तट पर स्थित था ताकि प्रवाह के समय मूर्ति इसके जल से स्नान कर सके। इस प्रकार वह चंद्रमा सदैव मूर्ति को स्नान कराने और उसकी सेवा करने में व्यस्त रहता था, कभी-कभी ऐसा महसूस होता था कि इस सुंदर संसार की रचना कैसे हुई है

सोमनाथ एक बारे में एक रोचक तथ्य यह है कि सोमनाथ का ज्योतलिंग हवा में रहता था जी अपने बिल्कुल सच सुना कई इतिहासकार इस पर शोध करते हैं कि यहा केसे संभव है कि बिना किसी सहारे के कोई वस्तु हवा में रही हो,खेर

पुराण में जब इतिहास का स्वाद लेलिया जाए तो
दिमाग काम करना बंद कर ही लेता है

2

पहला परिचय केशवी से

.

बस कुछ समय के लिए रुक गई, और उस स्टॉप पर एक छोटा सा परिवार भी था। उनके साथ एक 8-9 साल की मासूम बच्ची थी, जो अपने पिता के पास बैठते हुए मेरी सीट पर आ गई।

इतिहास और कहानियों के शौक़ीन के लिए बात करना एक आदत सी हो गई है। अगर कोई सुनने वाला मिल जाए—चाहे बड़ा हो या छोटा—तो फिर पूरी व्याख्या बिना रुके सुनाना बस स्वाभाविक लगने लगता है। (हा हा हा)

मैं अपनी किताब के पन्नों में गुम था कि बच्ची ने हल्की आवाज़ में पूछा,

“आप क्या पढ़ रहे हैं?”

मैंने मुस्कुराते हुए जवाब दिया,

“बस कुछ कहानियाँ और उनके सार ढूँढ रहा हूँ।”

उसकी उत्सुकता बढ़ गई। उसने पूछा,

“कौन सी कहानी?”

मैंने कहा,

“एक महान राजा, एक बहुत बड़ा प्रेमी और हां… सबके प्यारे भगवान श्री कृष्णा की कहानी।”

बच्ची की आँखें चमक उठीं।

“क्या वास्तव में श्री कृष्णा आज भी द्वारिका में हैं?”

मैं हँसा और पूछा,

“तुम्हारा नाम क्या है?”

वह हल्की शर्म से अपने पिता की ओर देखने लगी। पिता ने प्यार से कहा,

“भैया, अपना नाम बताओ।”

बच्ची ने धीरे-से कहा,

“मेरा नाम केशवी है।”

मैंने उसकी तरफ देखा और भीतर ही भीतर महसूस किया—राधा रानी की अनुभूति। राधा का एक नाम केशवी भी है।

मैं मुस्कुराया,

“क्या तुम्हें पता है, तुम्हारे नाम का अर्थ क्या है?”

वह भोली सी हँसी में बोली,

“सबकी प्यारी और लाडली।”

मैंने कहा,

“बिलकुल! तुम्हारा स्वरूप और मासूमियत बिल्कुल राधा रानी जैसी है।”

केशवी उत्सुक हो उठी,

“आप कहां जा रहे हैं?”

मैंने कहा,

“मैं द्वारिका जा रहा हूँ।”

वह अपने पिता की ओर देख कर बोली,

“हम भी तो वहीं जा रहे हैं ना?”

पिता ने हँसते हुए कहा,

“हाँ।”

केशवी ने फिर मेरी तरफ देखते हुए कहा,

“तो वहाँ तो भगवान कृष्ण रहते हैं।”

मैंने धीरे कहा,

“हाँ, बिल्कुल। वे हर कृष्ण प्रेमी के दिल में रहते हैं, लेकिन जहाँ वे पहले रहे थे, वह नगर अब समुद्र में समा गया।”

केशवी:

“कैसे?”

अविनाश:

“जरा ध्यान से सुनो… एक शिकारी के तीर से उन्हें चोट लगी और उन्होंने वहाँ अपना शरीर त्याग दिया। यह घटना फरवरी 18, 3102 ईसा पूर्व की मानी जाती है।

कुछ स्रोतों के अनुसार उनकी मृत्यु प्रभास पाटन, हिरन नदी के तट पर हुई।"

केशवी:

"परंतु भगवान कृष्ण तो बहुत शक्तिशाली थे, फिर उन्हें चोट कैसे लगी?"

अविनाश:

"दरअसल, भगवान कृष्ण को पहले से पता था कि उनका यह समय आने वाला है। यह केवल उनकी लीला का एक हिस्सा थी।

कुछ दिन पहले से ही वे चुप रहने लगे थे, और रुक्मणी जी चिंतित हो गई थीं।

वह व्यक्ति जिसकी वाणी से सबका मन मोह लिया करता था, आज इतनी चुप्पी क्यों है?

रुक्मणी ने कई बार उनसे पूछने की कोशिश की, पर कृष्ण ने जवाब टाल दिया।

यहाँ तक कि माता देवेकी और पिता वासुदेव को भी उनकी चुप्पी की भनक लगी।”

एक शाम, रुक्मणी जी ने कृष्ण के लिए उनकी मनपसंद डिनर तैयार किया।

कृष्ण ने हल्की मुस्कान दी और बहाने से सोने चले गए।

रुक्मणी जी की चिंता और बढ़ गई।

एक दिन कृष्ण ने उन्हें पास बिठाया और धीरे से कहा,

“रुक्मणी, आज नहीं तो कल मुझे जाना ही होगा। समझो कि मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ, चाहे कहीं भी रहूँ।”

रुक्मणी ने शांत होकर उनका हाथ थामा। उनके शब्द नहीं थे, पर उनके संग का एहसास कृष्ण को पूरी तरह समझ आ गया।

केशवी:

“तो कृष्ण ने शिकारी को मारा नहीं?”

अविनाश:

(धीरे मुस्कुराते हुए)

“नहीं, यह उनका जीवन और लीला का एक हिस्सा था।

कृष्ण ने उस तीर को स्वीकार किया, अपने समय और नियति के अनुसार।

और वही समय था, जब द्वारिका धीरे-धीरे समुद्र में विलीन हो गई।

लेकिन उनका प्रेम, उनका प्रभाव और उनकी यादें आज भी हर कृष्ण प्रेमी के दिल में जीवित हैं।”

3

कृष्ण का पिछला ....अवतार

पिछले अवतार में जो की भगवान श्री राम का था, यह कथा हम रामायण से सुनते हुए आए हैं कि जब भगवान श्री राम के पास सुग्रीव मदद मांगने आए थे और सुग्रीव ने अपनी व्यथा भगवान श्री राम को सुनाते हुए बताते हैं कि बाली ने किस प्रकार एक गलतफहमी के चलते उसे पूरे राज्य से निकाल दिया साथ सुग्रीव का सब कुछ छीनकर उसकी पत्नी को भी उसकी इच्छा के विरुद्ध अपने अधीन ही रख लिया सुग्रीव ने श्री राम को बताया कि सब कुछ छोड़कर राज्य चले जाने के बाद भी बल्कि उसे करने का प्रयत्न कर रहा था क्योंकि एक ऋषि के श्राप के कारण बाली ऋषि मुख पर्वत पर नहीं आ सकता था इसलिए सुग्रीव इस पर्वत पर हनुमान जी और जामवंत जैसे मंत्रियों के साथ रह रहे थे लेकिन बाली के भाई से सुग्रीव उसे पर्वत से बाहर नहीं निकल पा रहे थे,

जब भगवान श्री राम ने यह सभी बातें सुनी तो उन्हें बलि पर बहुत क्रोध आया उन्होंने सुग्रीव से कहा कि एक मित्र होने के नाते में तुम्हारी सहायता करूंगा मैं बाली को मार कर तुम्हारे भाई से और तुम्हारी पत्नी को बलि के चंगुल से मुक्त करूंगा फिर श्री राम को बताया गया की बालिक को यह वरदान प्राप्त है कि उसके सामने उससे लड़ने या युद्ध करने के उद्देश्य से आएगा उसका आधा बल बाली में ही समा जाएगा यही कारण है की बाली को अब तो युद्ध में कोई भी नहीं हर सका, यह

सुनकर श्री राम ने कुछ विचार किया और फिर बाली को एक वृक्ष की आड़ से करने का निश्चय किया श्री राम ने ऐसा निश्चय इसलिए नहीं किया था कि वह बाली को सामने से हार नहीं सकते थे उन्होंने ऐसा ही निश्चय क्यों किया यह जानने के लिए पहले बाली और हनुमान जी के बीच होने वाले घटना को देखना होगा दरअसल अपने बाल और वरदान के अहंकार में एक बार बाली ने हनुमान जी को अपने साथ लड़ने की चुनौती दी थी हनुमान जी ने बाली को चुनौती स्वीकार कर लिया लेकिन बाली के पिता देवराज इंद्र घबरा गए उन्होंने तुरंत जाकर हनुमान जी से प्रार्थना की कि वह बलि के सामने अपने बाल का केवल 1/10 भाग लेकर आए अब जैसे ही बली हनुमान जी के सामने लड़ने के उद्देश्य से आया हनुमान जी के केवल इतने से बाल का भी आधा हिस्सा बाली में समाने लगा तभी बाली को ऐसा लगने लगा कि उसके शरीर की नसें फटने वाली है उसकी हालत ऐसी हो गई कि बहुत ठीक से चल भी नहीं पा रहा था तभी इंद्र ने बाली से कहा कि तुम तुरंत हनुमान जी के सामने चले जाओ क्योंकि उनके बल की कोई सीमा ही नहीं है यह अतुलित बल के स्वामी है तुम्हारा शरीर इनका बल नहीं संभाल पाएगा और इसे युद्ध करने से पहले ही तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी बल्कि तुरंत हनुमान जी के सामने से भाग गया इसके बाद बालिक कभी भी युद्ध की इच्छा से हनुमान जी के सामने नहीं आया, अब सोचिए कि

जो बलिराम दूध हनुमान जी के बल को नहीं संभाल सका वह श्री राम के निकट जाने से पहले ही बाली की बड़े भयंकर तरीके से मृत्यु हो जाएगी और इससे बाली को अपने प्रश्न के उत्तर भी नहीं मिलते और वह असंतुष्ट होकर मरता क्योंकि अपने बल के अहंकार में बालिक को अब तक अपनी किसी भी भूल का एहसास नहीं हो रहा था श्री राम ने बाली को एक वृक्ष की आड़ से करने का निश्चय किया जब बाली और सुग्रीव के बीच युद्ध हुआ तब भगवान श्री राम ने बल्कि एक पर एक साधारण सा तीर चलाया ताकि बाली की तुरंत मृत्यु ना हो और मरने से पहले उसे अपने सभी प्रश्नों के उत्तर भली-भांति प्राप्त हो जाए साथ ही जब उसे अपने सभी भूलों का एहसास हो जाए तब यदि उसकी इच्छा हो तो उपचार के बाद वहां पहले की तरह जीवित भी रह सकता है श्री राम का बाद लगते ही तत्काल मृत्यु हो जाती है एकमात्र बाली ही था जिसने श्री राम का बाद लगने के बाद अपनी इच्छा से प्राण त्यागे इसका अर्थ था कि श्री राम ने बाली को मार डालने के लिए नहीं बल्कि उसे सबक सिखाने और घायल करने के लिए उसे पर तीर चलाया था श्री रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास जी लिखते हैं कि श्री राम का तीर लगने के बाद बाली व्याकुल होकर धरती पर गिर पड़ा लेकिन प्रभु श्री राम को आगे देखकर वहां फिर उठ बैठ वह देखता है कि भगवान श्री राम का शरीर श्याम रंग का व सिर पर लंबे केश

बनाए हैं लाल नेत्र हैऔर धनुष चढ़ाए हैं किसी समय सुग्रीव भी होता उत्साहित हो गिरा हुआ था उसके हृदय में बालि के भाई का भय लगा था लेकिन श्री राम से मिलन हुआ तो वह उठ खड़े हुए ठीक वैसे ही बाली भले ही गिर पड़ा था लेकिन श्री राम को देखते ही वहां फिर उठ बैठा एक तरफ बाली के मन में कई प्रश्न है तो वही वहां श्री राम का जीव भर कर दर्शन भी कर रहा है और मन ही मन आनंदित हो रहा है,

मन ही मां श्री राम को भेद पता चलने पर उनके द्वारा तीर लगने पर अपना जन्म सफल जानकर बालिक हृदय में प्रीति आ गई,

लेकिन मुख में कठोर वचन थे उसने श्री राम से पूछा कि आपने धर्म की रक्षा के लिए अवतार लिया है आपने मेरे किस दोष के कारण मुझे मारा इसी के साथ बाली ने क्रोध व श्री राम को बड़े कठोर वचन भी कहे और अनेक प्रकार से उन पर आक्षेप भी लगाए

तब श्री राम ने बाली कहा बल्कि धर्म अर्थ का काम और लौकिक सदाचार को तुम सुबह ही नहीं जानते हो कि किसी भी पुरुष के लिए उसके छोटे भाई की पत्नी अपनी बहन और पुत्री और पुत्र की पत्नी यह चारों समान है जो कोई भी इन चारों को बुरी नजर से देखा है या उनकी इच्छा के विरुद्ध

अपने अधीन रखता है उसे करने में पाप नहीं होता तुम्हें तुम्हारी पत्नी ने भी समझाया लेकिन तुम अपने अहंकार में सब की बातों को अनसुना कर सुग्रीव को करने चले आए आज जो तुम इस अवस्था में आकर धर्म की बातें कर रहे हो यदि सच में तुम्हें पता होता कि धर्म क्या होता है तो तुम सुग्रीव और उसकी पत्नी के साथ अधर्म ना करते

हमें ऐसी कथाएं बहुत जगह सुनने को मिलती है और यहीं पर कुछ ऐसी कथाएं भी हैं जिसमें यह कहा गया है कि भगवान श्री राम ने जब बाली को मारा था तब भगवान श्री राम यहां जानते थे कि उन्होंने जिस प्रकार बाली को पेड़ के पीछे से तीर मारा था उसी प्रकार अगले अवतार में भी उन्हें शिकारी द्वारा पेड़ के पीछे छुपके से तीर लगेगा और हम सब यहां जानते हैं कि भगवान श्री कृष्ण के अंतिम चरणों में शिकारी द्वारा उन्हें तीर मर गया था

जो की कहा जाए तो भगवान श्री राम के अवतार और भगवान श्री कृष्ण के अवतार से काफी कथाएं जुड़ती है

शायद इसी कारण भगवान श्री कृष्णा जानते थे कि उनका अंतिम समय किस प्रकार होगा और इसी कारण उन्होंने शिकारी जरा को समझाया कि

इसमें तुम्हारी कोई गलती नहीं है यह मेरे पिछले जन्म की कहानी जुड़ी हुई है

केशवी- वाकई हमारा इतिहास काफी अलग हैं भारत की संस्कृति यहां के रीति रिवाज यहां की पौराणिक कथाएं वह बहुत कुछ आपके साथ तो इतनी सारी बातें करके और इतना कुछ जानकर मुझे बहुत कुछ आज जानकारी मिल गई यह सब बातें मेरी स्कूल की सहेलियों के बताऊंगी

वैसे आपसे कुछ पूछूं

अविनाश-हां पूछो

केशवी -क्या वास्तविकता में द्वारिका का प्रमाण आज भी हमें मिलता है

4

द्वारिका प्रमाण

केशवी:

, क्या सच में द्वारिका अब भी समुद्र में कहीं छिपी हुई है?”

अविनाश:

(मुस्कुराते हुए)

“हाँ, बिल्कुल। कई पुरातत्वविदों ने यहाँ खुदाई की है। समुद्र के भीतर जो पत्थर और ईंटें मिलीं, उनकी कार्बन डेटिंग की गई।

और पता चला कि ये लगभग 5,000 साल पुराने हैं—जिसका समय महाभारत के दौर से लगभग मेल खाता है।



पहली बार यह खोज कार्य एस. आर. राव ने 1960 के दशक में शुरू किया।

जब समुद्र में गोथा डाला गया, तो 30-40 मीटर गहराई में द्वारिका के अवशेष मिले।

बड़ी-बड़ी ईंटें और संरचनाएँ—मानो किसी प्राचीन महल या नगर का पता लग गया हो।

हर साल नई खोजें होती रहीं—कभी मटके, कभी पत्थर—हर एक चीज़ इतिहास को और करीब से समझने का मौका देती है।”

केशवी:

(आंखें चमकते हुए)

“वाह! यह तो अद्भुत है। मैं भी पुरातत्वविद् बनना चाहूंगी।”

अविनाश:

“बिलकुल, छोटी इतिहासकार। पर याद रखो, इतिहास में हमेशा विवाद और अलग-अलग दृष्टिकोण भी होते हैं।

महाभारत और कृष्ण की तिथियों को लेकर आज भी कई मतभेद हैं।”

विजय:

“लेकिन अविनाश, जब द्वारिका समुद्र में विलीन हो गई थी, तो वहाँ के लोग क्या हुए? उनकी तो मृत्यु हो गई होगी न?”

अविनाश:

“जितने भी निवासी कृष्ण के वंशज थे, उन्हें अर्जुन और कृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न द्वारा सुरक्षित प्रभास पाटन पहुँचाया गया।”

केशवी:

“प्रभास पाटन? वो कहाँ है?”

अविनाश:

“आज का सोमनाथ।

कभी द्वारिका की आपातकालीन राजधानी हुआ करती थी।

कहा जाता है कि श्री कृष्ण अपनी रानी रुक्मणी के साथ भगवान शिव को जल अर्पित करने सोमनाथ मंदिर आते थे।”

केशवी:

“तो इसका मतलब है, भगवान श्री कृष्ण के प्राण त्यागते ही द्वारिका डूब गई?”

अविनाश:

(धीरे मुस्कुराते हुए)

“हाँ, यही मुख्य कारण था।

लेकिन इसके साथ-साथ प्राकृतिक आपदाएँ और समय की लहरें भी इसमें योगदान देती हैं।

कहते हैं कि यह विलय एक तरह का प्राकृतिक पुनर्जागरण था—पुराना नगर समुद्र में विलीन हुआ, ताकि नया जीवन, नए नगर और नए रास्ते बन सकें।

और सबसे अहम—द्वारिका का अस्तित्व कृष्ण के जीवन से जुड़ा था।

जैसे कोई महान दीपक बुझ जाए, वैसे ही शहर की रौशनी समुद्र में विलीन हो गई।”

केशवी:

(धीरे से समुद्र की ओर देखती हुई)

“तो फिर यह सब सच में हुआ… यह इतिहास को पढ़ने और देखने का अनुभव अद्भुत है।”

विजय:

“सच में, जब आप इसे ऐसे जीवंत रूप में बताते हैं, तो मानो मैं स्वयं समुद्र में डूबे शहर की गलियों में घूम रहा हूँ।”

अविनाश:

(मुस्कुराते हुए)

“यही इतिहास की खासियत है। इसे सिर्फ पढ़ा नहीं जा सकता—इसे महसूस करना पड़ता है।

और यही कारण है कि मैं चाहता हूँ कि हर बच्चा, हर छात्र, इतिहास को सिर्फ किताबों में नहीं बल्कि अनुभवों में समझे।”

5
महाभारत में कृष्ण बलराम की भूमिका

अविनाश -

कहते हैं गांधारी ने श्री कृष्ण को श्राप दिया था कि जिस तरह मेरे बेटे तुम्हारे कारण मारे गए इस तरह तुम्हारा वंश भी खत्म हो जाएगा क्योंकि युद्ध में दोनों तरफ से तुम थे ...



क्यों गए)

अविनाश -अब इस पल मुझे काफी हंसी प्यार वह इस छोटी सी बच्ची की केशवी - दोनों तरफ से यह कैसे संभव है ,क्योंकि कृष्णा तो एक तरफ से लड़ रहे थे?

अविनाश - वास्तव में, महाभारत युद्ध से पहले धर्म और अधर्म के इस महासंघर्ष में,

पांडवों और कौरवों—दोनों को ही श्रीकृष्ण की सहायता की आवश्यकता थी।

युद्ध की तैयारी के समय युधिष्ठिर और दुर्योधन, दोनों ही श्रीकृष्ण के पास सहायता माँगने पहुँचे।

श्रीकृष्ण ने उनसे पहले ही स्पष्ट कर दिया—

“मैं स्वयं इस युद्ध में शस्त्र नहीं उठाऊँगा और न ही किसी के विरुद्ध युद्ध करूँगा।

परंतु तुम दोनों में से प्रत्येक को एक विकल्प मिलेगा—

या तो मुझे चुन लो, या फिर मेरी विशाल यादव सेना को।”

यह सुनकर दुर्योधन ने बिना किसी संकोच के यादव सेना को चुन लिया।

उसके मन में यह विचार था कि—

“कृष्ण स्वयं युद्ध नहीं करेंगे,

तो उनका साथ युद्ध में किस काम का?

सेना ही विजय का वास्तविक साधन है।”

इसके विपरीत, युधिष्ठिर ने अत्यंत सहज और शांत भाव से केवल श्रीकृष्ण को ही चुन लिया।

दुर्योधन को यह निर्णय मूर्खतापूर्ण लगा।

उसे विश्वास था कि युद्ध में बल और संख्या ही निर्णायक होते हैं,

और पांडवों ने एक बड़ा अवसर खो दिया है।

तब श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से पूछा—

“जब मैं युद्ध में शस्त्र नहीं उठाऊँगा,

तो तुम मेरा क्या करोगे?”

युधिष्ठिर ने विनम्रता और दृढ़ विश्वास के साथ उत्तर दिया—

“हमें आपके शस्त्रों की आवश्यकता नहीं है,

हमें आपकी सेना की भी आवश्यकता नहीं है।

हमें केवल आपके मार्गदर्शन की आवश्यकता है।

आप हमारे साथ रहिए—

यही हमारे लिए पर्याप्त है।”

यही वह क्षण था जहाँ यह स्पष्ट हो गया कि

महाभारत का युद्ध केवल शस्त्रों से नहीं,

बल्कि विवेक, धर्म और मार्गदर्शन से लड़ा जाना था। महाभारत युद्ध से पूर्व ही भगवान बलराम ने यह निश्चय कर लिया था कि वे इस युद्ध में भाग नहीं लेंगे।

इसका प्रमुख कारण उनका निष्पक्ष भाव था।

भगवान बलराम ने पांडवों और कौरवों—दोनों को ही गदा-युद्ध की शिक्षा दी थी।

भीम और दुर्योधन—दोनों ही उनके शिष्य थे।

ऐसी स्थिति में किसी एक पक्ष का समर्थन करना उनके लिए धर्मसंगत नहीं था।

अपने इसी निष्पक्ष सिद्धांत के कारण भगवान बलराम ने युद्ध से स्वयं को अलग रखते हुए

तीर्थ-यात्रा पर जाने का निर्णय लिया।

वे इस यात्रा पर अपने भतीजे प्रद्युम्न के साथ निकले—

जो भगवान श्रीकृष्ण के पुत्र थे।

बलराम का यह निर्णय यह दर्शाता है कि

धर्म केवल युद्ध लड़ने में ही नहीं,

कभी-कभी युद्ध से दूर रहकर निष्पक्ष बने रहने में भी होता है।

(विजय अपनी सोच में खो गए थे)

केशवी - पर आपने वह तो बताया नहीं कि भगवान कृष्ण ने दोनों तरफ से युद्ध कैसे लड़ा ?

निस्संदेह, भगवान श्रीकृष्ण ने महाभारत युद्ध में पांडवों का पक्ष लिया—

और ऐसा होना स्वाभाविक भी था।

एक कारण धर्म था,

तो दूसरा कारण परिवार और प्रेम।

पांडवों की ओर उनका झुकाव केवल नीति या रणनीति नहीं था,

बल्कि एक पारिवारिक बंधन भी था—

क्योंकि पांडवों में से एक, अर्जुन,

उनकी बहन सुभद्रा के पति थे।

अर्जुन और सुभद्रा का प्रेम-प्रसंग कोई साधारण कथा नहीं था।

जब भगवान बलराम को इस संबंध का पता चला,

तो वे अत्यंत क्रोधित हो गए।

वे इस विवाह के पक्ष में नहीं थे

और सुभद्रा का विवाह अर्जुन से न कराने का निश्चय कर चुके थे।

परंतु यह वही संसार था,

जहाँ एक ऐसा प्रेमी था

जिसने पूरी दुनिया को प्रेम का अर्थ सिखाया—

जिसकी प्रेम-कथाएँ युगों-युगों तक जीवित रहने वाली थीं।

स्वयं भगवान श्रीकृष्ण।

उसी कृष्ण ने

अर्जुन और सुभद्रा के प्रेम को समझा,

उसकी मर्यादा को पहचाना

और अंततः दोनों का विवाह स्वयं करवाया।

यह विवाह किसी राजसी आयोजन से अधिक,

घर से भागकर प्रेम की रक्षा करने जैसा था—

जहाँ धर्म, साहस और स्नेह तीनों एक साथ खड़े थे।

(यह सब सोचकर लेखक के चेहरे पर एक हल्की-सी मुस्कान आ जाती है।)

महाभारत युद्ध में श्रीकृष्ण की भूमिका अद्वितीय और द्वंद्वपूर्ण थी।

जैसा कि पहले ही निर्णय हुआ था—

कृष्ण की विशाल यादव सेना दुर्योधन के पक्ष में थी,

और स्वयं श्रीकृष्ण पांडवों के साथ थे,

परंतु शस्त्रविहीन, केवल सारथी और मार्गदर्शक के रूप में।

इस प्रकार युद्धभूमि में श्रीकृष्ण दोनों पक्षों से जुड़े हुए थे—

एक ओर शक्ति, दूसरी ओर धर्म।

यही कारण था कि जब युद्ध समाप्त हुआ

और कौरवों के सौ पुत्र मारे गए,

तो माता गांधारी का शोक क्रोध में परिवर्तित हो गया।

गांधारी ने अपने सौ पुत्रों के विनाश का दोष

किसी योद्धा पर नहीं,

बल्कि श्रीकृष्ण पर लगाया।

क्योंकि—

श्रीकृष्ण सब कुछ पहले से जानते थे।

वे जानते थे कि युद्ध का परिणाम क्या होगा।

वे जानते थे कि अधर्म का अंत निश्चित है।

फिर भी उन्होंने उसे रोका नहीं।

गांधारी ने कहा कि

यदि कृष्ण चाहते,

तो इस महाविनाश को टाल सकते थे।

यही कारण था कि

उन्होंने अपने सौ पुत्रों के हत्यारे के रूप में

श्रीकृष्ण को ही देखा और उन्हें श्राप दिया।

यह प्रसंग यह स्पष्ट करता है कि

श्रीकृष्ण केवल किसी एक पक्ष के नहीं थे—

वे काल, धर्म और नियति के साथ खड़े थे।

, इसी कारण गांधारी ने कृष्ण को अपने बेटों का हत्यारा माना !

यह कहना उचित नहीं होगा कि श्रीकृष्ण ने युद्ध रोकने का प्रयास नहीं किया।

वास्तव में, उन्होंने युद्ध टालने के लिए हर संभव प्रयास किया था।

श्रीकृष्ण स्वयं शांति-दूत बनकर हस्तिनापुर गए।

उन्होंने दुर्योधन से केवल पाँच गाँव माँगे—

युद्ध से बचने के लिए इतना छोटा-सा समझौता।

परंतु दुर्योधन ने स्पष्ट कह दिया कि

वह सूई की नोक जितनी भूमि भी पांडवों को नहीं देगा।

इतना ही नहीं,

श्रीकृष्ण ने माता गांधारी को भी पहले ही इस महाविनाश का संकेत दे दिया था।

उन्होंने यह स्पष्ट किया कि

यदि युद्ध हुआ, तो कौरवों का विनाश निश्चित है।

यह सब जानते हुए भी

माता गांधारी ने अपने पुत्रों को रोकने का प्रयास नहीं किया।

इसके विपरीत,

उन्होंने अपने पुत्र दुर्योधन को विशेष शक्तियाँ प्रदान कीं—

जिससे उसका शरीर वज्र के समान कठोर हो गया।

परंतु नियति का नियम था—

उसके शरीर का एक भाग, जाँघ, असुरक्षित रह गई।

और यही हम सब जानते हैं कि

महाभारत युद्ध के अंतिम दिन

भीम ने दुर्योधन की जाँघ पर प्रहार किया।

उसी क्षण भगवान बलराम युद्धभूमि में उपस्थित हुए।

उन्होंने भीम पर युद्ध-नियमों के उल्लंघन का आरोप लगाया,

क्योंकि गदा-युद्ध में जाँघ पर प्रहार वर्जित था।

उस समय ऐसा प्रतीत हुआ

मानो श्रीकृष्ण और बलराम के बीच भी

क्षणिक मतभेद उत्पन्न हो गया हो।

तब श्रीकृष्ण ने बलराम को स्मरण कराया—

“युद्ध-नियमों का उल्लंघन

उस दिन ही हो चुका था,

जब अभिमन्यु को

सात महारथियों ने मिलकर छल से मार डाला था।”

उस क्षण के बाद

यह युद्ध केवल युद्ध नहीं रह गया था।

वह धर्म और अधर्म के बीच का अंतिम संघर्ष बन चुका था।

विजय, तुम बोलते-बोलते अचानक चुप क्यों हो गए?

बस यही सोच रहा हूँ—

कि जब मैं उस क्षण श्रीकृष्ण को अपने भीतर समेटकर देखता हूँ,

तो महसूस होता है कि वह कितने अकेले, अपने आप में,

अवर्णनीय अनुभूति से गुजर रहे थे।

वे वही क्षण थे जब उन्होंने युद्ध रोकने के लिए हर संभव प्रयास किया।

वे वही क्षण थे जब उन्होंने युद्ध को टालने का प्रस्ताव रखा,

परंतु अंततः उन्हें सुनना पड़ा—

कि वे स्वयं इस महाविनाश की जिम्मेदारी के अधिकारी हैं।

वह शांति और धर्म का मार्ग चुनते हुए,

संपूर्ण संसार की आँखों में अकेले खड़े थे।

और यही अनुभूति, यही अहसास,

मन को थामने वाली शक्ति बन जाता है—

कि कभी-कभी धर्म का बोझ अकेले ही उठाना पड़ता है।

विजय:

“अविनाश, मुझे यह बताओ... द्वारिका डूबने के बाद क्या बलराम प्रभास-पाटन गए थे?”

अविनाश:

(थोड़ी देर चुप रहते हुए, आँखें कहीं दूर समुद्र की ओर)

“नहीं, विजय... यह कहानी मैंने पहले नहीं बताई।

जब श्रीकृष्ण ने अपने प्राण त्यागे,

बलराम ने महसूस किया—जैसे उनका जीवन केवल कृष्ण के साथ ही बंधा था।

वे प्रभास-पाटन के पास एक छिपी हुई गुफा में गए।

वहाँ उन्होंने ध्यान किया, और तभी उनके मुंह से एक सफेद साँप प्रकट हुआ।

यह कोई साधारण साँप नहीं था... यह उनका आध्यात्मिक मार्ग था।

साँप ने उन्हें भौतिक संसार से धीरे-धीरे बाहर ले जाकर समुद्र में प्रवेश कराया।

जैसे वे और संसार अलग-अलग नहीं, बल्कि केवल रूप बदलकर एक ही धारा में विलीन हो गए।

यही बलराम का रहस्य है—

जो भौतिक रूप से समाप्त हो गया,

पर उनका अस्तित्व, उनकी शक्ति,

सदैव कृष्ण के साथ विलीन और अमर हो गई।”

विजय:

(सांस रोकते हुए)

“तो बलराम ने भी अपने प्रभास में,

शांति और पूर्णता की खोज में

कृष्ण के साथ मिलकर अंतिम यात्रा की...”

अविनाश:

“हां, विजय। यही शक्ति और प्रेम का रहस्य है।

जो भौतिक दुनिया में दिखाई नहीं देता,

वो अनुभव ही वास्तविकता है।

और यही हमें बताता है कि धर्म, प्रेम और आत्मा—

कभी भौतिक बंधनों में नहीं बँधते।”



(केशवी अपना ख्यालों में खोई हुई थी सोच रही थी
की कितना अच्छा होता अगर भगवान कृष्ण
हमेशा ही राधा रानी के साथ वृंदावन रहते हैं)

अविनाश -इतिहासकार आपकी बात एकदम सही है

केशवी -उदास चेहरे से (तो वह मासूमियत्ता पर अटूट प्रेम आ रहा था |

6

जरासंध और कालयवन

विजय - हां मेरे मन में भी वही चल रहा है आखिर क्यों वह मथुरा से द्वारका आए

अविनाश -जैसा आपको पता है यह की कृष्ण के मामा जो कंस थे जब भगवान कृष्ण ने कंस का वध किया व कंस के पापों का नाश किया, उसे घटना के बाद मगध के राजा जरासंध ने कृष्ण को खत्म करने का निर्णय लिया इसका मुख्य कारण यह था कि कंस की पत्नी अस्ति जो की राजा जरासंध की पुत्री थी और जरासंध ने अपनी पुत्री के विधवा होने का मुख्य कारण कृष्ण को माना इसी कारण से जरासंध कृष्ण से बदले की भावना रखने लगा

जरासंध ने मथुरा पर 17 बार आक्रमण किया जिसमें जरासंध के साथ काफी विशाल सेना थी इतिहासकार उस सेना काआंकड़ा कुछ इस प्रकार बताते हैं

21,870 (हाथी), 65,610 (घोड़ा), 109,350 (पैदल सेना), 218,700 (योद्धा), 21,870 (रथ) जब इतनी सारी सेना मथुरा पर हमला करेगी तो हम कल्पना कर सकते हैं कि कृष्ण और बलराम के लिए कितनी कठिनाई होगी पर हर बार कृष्ण और बलराम की विजय हुई

विजय - वाकई यकीन नहीं होता कि इतनी विशाल सेना को भी कृष्ण बलराम ने हरा दिया,

केशवी उन आंकड़ों को सोच भी नहीं पा रही थी कि यह कितने होते हैं और कितने थे बस वह अनुमान लगा रही थी कि हां बहुत ही विशाल सी सेना थी जिसे कृष्ण और बलराम ने हरा दिया

केशवी -परंतु 1 मिनट फिर कृष्ण ने मथुरा क्यों छोड़ दी

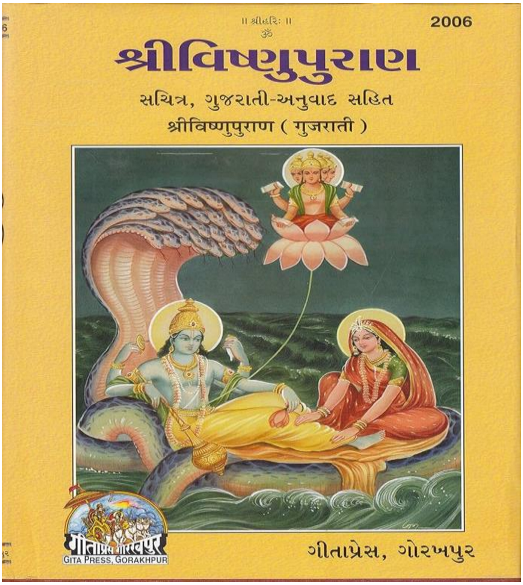
अविनाश - क्योंकि केशवी अभी अंतिम युद्ध बचा हुआ था और इस युद्ध ने सारी हदें पार कर दी, इस बार जरासंध अपनी पिछली हांरो का बदला लेना चाहता था और इस बार

जरासंध कालयवन के साथ 18वें आक्रमण में 30 लाख से अधिक राक्षसों के साथ मथुरा पर हमला किया गया था, ये संख्या संतुष्ट नहीं हो सकती है क्योंकि ये संख्या बहुत अधिक है, हम मान सकते हैं कि वे हजार या लाख में हो सकते हैं लेकिन हम पुराण और शिलालेख को नहीं भूल सकते हैं। जो वास्तव में कुछ ऐसा दिखाता है जो वास्तव में कई इतिहासकारों और कई शोधकर्ताओं को चौंका देता है

इस बार कृष्ण का मुकाबला जरासंध के साथ ही कालयवन के साथ भी था

विजय - कालयवन कौन है?

विष्णु पुराण और हरिवंश के अनुसार, कालयवन एक यवन राजा था। वह क्रोध का आंशिक अवतार था



ब्रह्माण्ड पुराण में कालयवन के जन्म की निम्नलिखित कहानी बताई गई है: व्रका देवी नाम की एक महिला ने गर्गया (गर्गया "गर्गा के वंशज") की पौरुष क्षमता का परीक्षण करने का फैसला किया। गर्गया स्खलन करने में असमर्थ थे, जिसके लिए यादवों ने उनका अपमान किया। 12 साल की तपस्या के बाद, गार्ग्य को महादेव से वरदान मिला कि उन्हें एक पुत्र मिलेगा जो यादवों को नष्ट कर देगा। अपनी तपस्या के दौरान, उन्होंने लोहे का भराव खाया जिससे उनका रंग लोहे जैसा काला (काला) हो गया। इसके बाद, गार्ग्य मथुरा आए, और एक चरवाहे की बेटी (गोपी) के साथ यौन संबंध बनाया, जो वास्तव में भेष में एक अप्सरा थी। कालयवन इस मिलन का परिणाम था: गर्ग ने उसे नए राजा के रूप में ताज पहनाया, और जंगल में चले गए

18वें हमले में कालयवन ने जरासंध के साथ गठबंधन किया था, यहाँ तब है जब कालयवन ने कृष्ण को एकल युद्ध के लिए चुनौती दी थी और तब कालयवन कृष्ण के साथ युद्ध करने आया था, और फिर भी उसके पास किसी भी प्रकार का हथियार न उठाने के लिए पर्याप्त सिद्धांत थे। उसने उससे आमने-सामने लड़ने का फैसला किया। इस प्रकार वह कृष्ण को पकड़ने और युद्ध करने के लिए तैयार हो गया।

हालाँकि, कृष्ण कालयवन की ओर देखे बिना आगे बढ़ गए और कालयवन ने उन्हें पकड़ने की इच्छा से उनका पीछा करना शुरू कर दिया। लेकिन अपनी सारी तेजी से दौड़ने के बावजूद, वह कृष्ण को नहीं पकड़ सका। महान् प्राप्त मानसिक गति से भी कृष्ण को नहीं पकड़ा जा सकता कृष्ण को महान योगियों द्वारा प्राप्त मानसिक गति से भी नहीं पकड़ा जा सकता। उसे केवल भक्तिमय सेवा द्वारा ही पकड़ा जा सकता है, और कालयवन का अभ्यास भक्तिमय सेवा में नहीं किया गया था। वह कृष्ण को पकड़ना चाहता था, और चूँकि वह ऐसा नहीं कर सका इसलिए वह पीछे से उनका पीछा कर रहा था।

कालयवन बहुत तेजी से दौड़ने लगा, और वह सोच रहा था, "अब मैं निकट हूँ; मैं उसे पकड़ लूंगा," लेकिन वह नहीं पकड़ सका। कृष्ण उसे बहुत दूर ले गये और वह एक पहाड़ी की गुफा में घुस गया। कालयवन ने सोचा कि कृष्ण उससे युद्ध करने से बचना चाहते हैं और इसलिए गुफा में शरण ले रहे हैं। उन्होंने उन्हें निम्नलिखित शब्दों से दंडित करना शुरू किया: "हे कृष्ण! मैंने सुना है कि आप यदुवंश में जन्मे एक महान वीर हैं, परंतु मैं देख रहा हूँ कि आप सचमुच कायरों की भाँति युद्ध करने से भाग रहे हैं। यह आपके अच्छे नाम और पारिवारिक परंपरा के योग्य नहीं है। कालयवन पीछा कर रहा था, बहुत तेजी से दौड़

रहा था, लेकिन फिर भी वह कृष्ण को नहीं पकड़ सका क्योंकि वह पापपूर्ण जीवन के सभी प्रदूषणों से मुक्त नहीं था जब कृष्ण ने पहाड़ी की गुफा में प्रवेश किया, तो कालयवन ने उनका पीछा किया और विभिन्न कठोर शब्दों से उन्हें दंडित किया। कृष्ण अचानक राक्षस की नज़रों से ओझल हो गए, लेकिन कालयवन ने भी उसका पीछा किया और गुफा में प्रवेश कर गया। पहली चीज़ जो उसने देखी वह गुफा के भीतर सोता हुआ एक आदमी था। कालयवन कृष्ण से युद्ध करने के लिए बहुत उत्सुक था, और जब वह कृष्ण को नहीं देख सका, बल्कि केवल एक आदमी (राजा मुचकुंद) को लेटे हुए देखा, तो उसने सोचा कि कृष्ण इस गुफा के भीतर सो रहे हैं।

कालयवन बहुत फूला हुआ था और उसे अपनी ताकत पर गर्व था, और उसने सोचा कि कृष्ण लड़ाई से बच रहे हैं। अत: उसने सोते हुए व्यक्ति को कृष्ण समझकर बहुत जोर से लात मार दी। सोया हुआ आदमी बहुत देर से लेटा हुआ था। जब कालयवन की लात से उसकी नींद खुली तो उसने तुरंत अपनी आंखें खोलीं और चारों दिशाओं में देखने लगा। आख़िरकार उसे कालयवन दिखाई देने लगा, जो पास ही खड़ा था। वह आदमी असमय जाग गया था और इसलिए बहुत क्रोधित था, और जब उसने गुस्से में देखा,

तो उसकी आँखों से आग की किरणें निकलीं और कालयवन एक पल में जलकर राख हो गया।।

विजय - वाकई पहली बार सुनकर बहुत विचित्र सा लग रहा है भगवान कृष्ण की जितनी भी लीला हो या फिर उनका प्रेम ही क्यों ना हो भगवान कृष्ण द्वारा किया गया हर कार्य काफी अद्भुत है

इतनी देर में बस स्टॉप पर रुकी मैं बाहर उतार कर देखा तो वहां पर शासन जिला का बोर्ड लगा हुआ था यानी कि द्वारका कुछ ही दूर बचा था शासन से सोमनाथ की दूरी मात्र 50 से 60 किलोमीटर है पर मैंने सोचा कि अगर आते समय मुझे वक्त मिलता है तुम्हें बिल्कुल जाऊंगा मैंने एक चाय ऑर्डर की और कुछ सोचते सोचते हैं इस सफर के बारे में अनुभव करने लगा इतने में विजय मेरे पास आए चाय लेकर , मैंने पूछा केशवी कहां है उन्होंने जवाब दिया वह उसकी मां के पास सो रही है, मैंने कहा हां सही बात है आज इतनी कहानी जो सुनी है इसने काफी विजय भाई आपकी बेटी केशवी बहुत ही बुद्धिमान है और हर चीज जानने का उसमें बहुत उत्सुकता है आज के समय में जहां बालक अपने मोबाइल से फुर्सत नहीं मिल रही है वहां आपकी बेटी महाभारत की कहानी मैं, ग्रंथ में, और भगवान कृष्ण में इतनी बातें समझना चाहती है

विजय - वैसे अविनाश मुझे एक बात बताओ तुम्हारे परिवार में कौन-कौन है

अविनाश - माँ,पिताजी,दादा घर पर कम रहता है ज्यादा तक समय इधर उधर खोज या फिर किसी विषय को समय देने में निकल जाता है

विजय - तो फिर अगले का क्या सोचा है जीवन में किस राह पर जाने का फेसला किया है तुम्हारी बातें देख कर लगता है कि प्रवचन या कोई संन्यासी बनने का इरादा है (मुस्कान करते हुए दोनों)

अविनाश - मैं अपने विषय को समय देना चाहता हूं किसी कोलाज में अच्छे प्रोफेसर के रूप में पढ़ना चाहता हूं

विजय -इतिहास के ना

अविनाश -हा इतिहास का ही बस जीवन में कुछ सपने हैं बाकी अधिक उम्मीद में नहीं रखना चाहता

विजय - अच्छे विचार है काफी

विजय -क्या भैया अपने लेलिया मेरा इंटरव्यू

विजय -वैसे तुम्हारे जीवन में कोई है भी या नहीं ! मेरा मतलब की इतनी तुम अच्छी कहानी सुनाते हो इतनी बातें कहते हो जो किसी को पता ही नहीं है और भी किसी को सुनते हो या नहीं मेरा मतलब है कि कोई प्रेम वगैरा या कुछ ?

....

अविनाश अविनाश

अविनाश - हां.....

विजय - कहां खो गए भाई कुछ पूछ रहा था तुमसे मैं कोई जीवन में है भी या नहीं

अविनाश- क्या भैया कैसी बात करते हो कोई भी नहीं बस इतिहास के साथ जिंदगी जी रहा हूं , बाकी कभी इतना ज्यादा सोचा नहीं आज के रिश्ते वो नहीं रहे जेसा हम चाहते हैं बहुत कुछ बदला हुआ है या मुझे नहीं लगता शायद मैं ये जिम्मेदारी उठाने के लिए अभी तैयार हूं

विजय - तुम इतने चिंतित क्यों हो?

अविनाश - नई बस थोड़ी ठंड बढ़ गई है ना

(विजय ने एक सिगरेट जलाई और मुझे ऑफर करने लगा मैंने कहा नहीं भैया मैं नहीं पीता, मुस्कुरा कर बोलने लगा तुम्हारी उम्र में मैं भी कई चीज की थी उसने प्यार भी शामिल था पर हां समय के साथ ही जब जिम्मेदारी आती है तो लगता है कि अब उन चीजों से आगे बढ़ना जरूरी है तुम्हारे कुछ बातें बिना कहीं मैं समझ गया हूं फिक्र मत करो एक उम्र में हमें एक वस्तु सबसे अधिक प्रिय होती है जिसमें लगता है कि अगर यह नहीं होगा तो जीवन का अर्थ कुछ भी नहीं है परंतु समय के साथ भगवान हमारे लिए कुछ ऐसी चीज देता है जो हमने कभी सोच भी नहीं थी आज मेरी पत्नी विशाखा और मेरी प्यारी बेटी केशवी वही मेरा जीवन है क्योंकि भगवान जानता है कि हम किसी स्थिति से गुजरे हैं ,इसलिए ईश्वर हमें सही समय पर सब कुछ देखा बस हमें प्रतीक्षा करनी है कि हम हमारे कार्यों से हटे नहीं , मैं तुम्हें सब इसलिए बता रहा हूं क्योंकि तुम्हारी बातें तुम्हारा व्यवहार काफी अच्छा लगा मुझे -छोटे भाई जैसे ही हो तुम इसलिए यह मत सोचना की जीवन में कुछ ना रहने से पूरा जीवन खत्म हो गया हर मोड़ पर तुम्हें कुछ ना कुछ नया मिलता रहेगा जो शायद तुमने कभी सोचा भी नहीं था,

पता नहीं क्यों पर विजय भाई की बातें सुनकर काफी तसल्ली मिल रही

हम बस में चढ़े और हमारी बस हमारी मंजिल की तरफ निकल पड़ी

विजय - वैसे मुझे एक बात बताओ हर धर्म हर किसी चीज की व्याख्या अलग-अलग रूप क्या भगवान कृष्ण और महाभारत के बारे में भी कुछ ऐसा कहा गया है क्या ?

अविनाश -हां बिल्कुल कहा गया है जैसे की.......

7

विभिन्न संस्कृति और देश (जैन और हिंदू महाभारत पर सिद्धांत

हम सभी जानते हैं कि युद्ध का नेतृत्व किसने किया, अर्जुनको किसने युद्ध के लिए प्रेरित किया, और कृष्ण ने यदि हम विभिन्न पुराणों और शिलालेखों की तुलना करें, तो हमें स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि संस्कृति समय के साथ विकसित हुई, और इसके साथ ही कुछ नए सिद्धांत, नए दृष्टिकोण और महाभारत के ऐसे अध्याय सामने आए जो पहले सामान्य पाठकों के लिए अज्ञात थे।

किस तरह हर पल का पूर्वानुमान किया।

कृष्ण केवल योद्धा या रणनीतिकार नहीं थे—वे हमारे सर्वोच्च ईश्वर और ज्ञान के प्रतीक हैं।

आइए अब हम सीधे उन सिद्धांतों पर ध्यान दें, जो विभिन्न धर्म-दर्शन और ब्रह्माण्ड विज्ञान में पाए जाते हैं।

जैन ब्रह्माण्ड विज्ञान और पुराणों के अनुसार

जैन धर्म के 23वें तीर्थंकर नेमिनाथ को कहा जाता है कि वे कृष्ण और बलराम के चचेरे भाई थे।

पुराणों में यह वर्णित है कि नेमिनाथ ने स्वयं कृष्ण और बलराम को शिक्षा दी, और उनके मार्गदर्शन से कई कथाएँ जुड़ी हुई हैं।

इन कथाओं में हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि भगवान की कनेक्टिविटी और रहस्यमय घटनाएँ प्राचीन ग्रंथों में कैसे दर्ज हैं।

जैन पुराण में कुछ ऐसे विवरण हैं जो हमें गहन और चौंकाने वाली जानकारी देते हैं।

यह सब सत्य है या असत्य—इसका अंतिम निर्णय शायद कभी नहीं हो पाएगा। पर इतना निश्चित है कि यह केवल कल्पना भी नहीं लगती, क्योंकि इसी संदर्भ में एक कथा बार-बार उभरकर सामने आती है—भगवान श्रीकृष्ण, नेमिनाथ और गिरनार पर्वत के बीच का वह सूक्ष्म संबंध, जिसे इतिहास पूरी तरह सिद्ध नहीं करता, पर चेतना अस्वीकार भी नहीं कर पाती।

भगवान श्रीकृष्ण का गिरनार से संबंध केवल भूगोल का नहीं, बल्कि चेतना और वैराग्य की दो भिन्न दिशाओं का संगम है। बहुत कम लोग जानते हैं कि गिरनार केवल एक पर्वत नहीं, बल्कि वह भूमि है जहाँ कृष्ण-परंपरा और जैन चेतना पहली बार आमने-सामने आई—और वह भी किसी टकराव में नहीं, बल्कि एक गहरी मौन-स्वीकृति में। जैन परंपरा के अनुसार, नेमिनाथ—जिन्हें अरिष्टनेमि भी कहा जाता है—भगवान श्रीकृष्ण के चचेरे भाई थे। हरिवंश और जैन आगमों में उल्लेख मिलता है कि नेमिनाथ और कृष्ण दोनों यदुवंशी थे, दोनों का पालन-पोषण एक ही सांस्कृतिक परिवेश में हुआ, परंतु दोनों की चेतना ने जीवन को दो अलग दिशाओं में समझा। कृष्ण ने संसार के मध्य रहकर धर्म को साधा, जबकि नेमिनाथ ने संसार से हटकर सत्य को चुना।

कहा जाता है कि जब नेमिनाथ का विवाह निश्चित हुआ और बारात निकली, तभी मार्ग में उन्होंने पशुओं की करुण चीखें

सुनीं—वे पशु जो विवाह-भोज के लिए बलि दिए जाने वाले थे। उसी क्षण नेमिनाथ के भीतर कुछ टूट गया। जहाँ एक ओर यदुवंशी परंपरा उत्सव और वैभव की ओर बढ़ रही थी, वहीं नेमिनाथ ने उसी क्षण संसार से मुँह मोड़ लिया। उन्होंने बारात लौटा दी, मुकुट उतार दिया और बिना किसी संघर्ष के वैराग्य को स्वीकार कर लिया। यही वह क्षण था जहाँ कृष्ण और नेमिनाथ के मार्ग अलग हुए—पर विरोध में नहीं। जैन ग्रंथों में संकेत मिलता है कि श्रीकृष्ण इस निर्णय से क्रोधित नहीं हुए, बल्कि भीतर से नेमिनाथ की चेतना को समझ गए। कृष्ण जानते थे कि धर्म केवल युद्धभूमि में नहीं, कभी-कभी त्याग में भी प्रकट होता है।

नेमिनाथ ने जिस स्थान को तप और मोक्ष के लिए चुना, वही गिरनार था। गिरनार को जैन परंपरा में मुक्ति-क्षेत्र माना जाता है, पर उसका अर्थ इससे कहीं अधिक गहरा है। यह वही पर्वत है जो समुद्र के निकट खड़ा है—स्थल और जल की सीमा पर—ठीक वैसे ही जैसे नेमिनाथ की चेतना संसार और संन्यास की सीमा पर खड़ी थी। जैन आगमों के अनुसार, नेमिनाथ ने गिरनार पर घोर तप किया और यहीं से कैवल्य ज्ञान प्राप्त किया। यही कारण है कि गिरनार को केवल तीर्थ नहीं, बल्कि "वैराग्य का पर्वत" कहा जाता है। यह संयोग नहीं लगता कि कृष्ण की द्वारिका समुद्र में डूबी और नेमिनाथ का गिरनार समुद्र के ऊपर अडिग खड़ा रहा—मानो एक संसार का अंत और दूसरे का स्थायित्व एक साथ लिखा गया हो।

कुछ अल्पज्ञात परंपराओं में यह भी संकेत मिलता है कि श्रीकृष्ण ने अपने जीवन के अंतिम वर्षों में गिरनार की ओर

दृष्टि डाली थी—प्रत्यक्ष यात्रा नहीं, बल्कि स्मृति के रूप में। क्योंकि नेमिनाथ वह दर्पण थे, जिसमें कृष्ण स्वयं को एक दूसरी संभावना के रूप में देख सकते थे—यदि उन्होंने युद्ध, राजनीति और रणनीति का मार्ग न चुना होता। इसीलिए कृष्ण और नेमिनाथ का संबंध संघर्ष का नहीं, संतुलन का था। एक ने संसार को भीतर से बदला, दूसरे ने संसार को त्यागकर उसे प्रश्नों के कटघरे में खड़ा कर दिया। शायद यही कारण है कि भारतीय चेतना में कृष्ण "पूर्ण पुरुष" माने गए और नेमिनाथ "पूर्ण विरक्ति"।



Figure 4 girnar parvat

गिरनार इसी कारण महत्वपूर्ण है। वह केवल नेमिनाथ का पर्वत नहीं, बल्कि कृष्ण-परंपरा का मौन उत्तर है। वहाँ न शंखनाद है, न युद्धघोष—वहाँ केवल वह शांति है, जो तब प्रकट होती है, जब धर्म को बिना शब्दों के समझ लिया जाता है।

उदाहरण के लिए—उनकी मृत्यु के बाद, माता गांधारी के श्राप के कारण उन्हें तीसरे नरक में भेजा गया, यह एक ऐसा तथ्य है जो हिन्दू और जैन दोनों परंपराओं में अलग-अलग दृष्टिकोण से देखा गया है।

हिन्दू ब्रह्माण्ड विज्ञान और भगवद्गीता

हिन्दू दृष्टिकोण से हम सभी जानते हैं कि भगवद्गीता में कृष्ण और अर्जुन के बीच संवाद हुआ।

यह संवाद केवल युद्ध की रणनीति के बारे में नहीं है, बल्कि ज्ञान, धर्म और जीवन के सर्वोच्च सिद्धांतों को दर्शाता है।

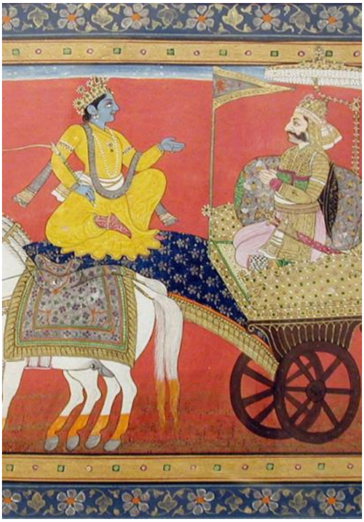
यहाँ हम देखते हैं कि कैसे कृष्ण ने अर्जुन को मार्गदर्शन दिया, और उसी मार्गदर्शन में हम भी ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

कृष्ण और बलराम के गुरु, उनकी शिक्षाएँ, और उनका मार्गदर्शन—सभी हमें जीवन और धर्म के रहस्यों से परिचित कराते हैं। मिलते हैं और वह संदीपनी हैं जो उन दोनों को पूरी शिक्षा देते हैं लेकिन अलग-अलग धार्मिक पुस्तकों में और सिद्धांतों के विभिन्न स्रोत।



Figure 5 Purana

हिंदू पुराण में बहुत सारे स्रोत उपलब्ध होने के कारण हम उनमें लिखे गए बहुत से तथ्यों के बारे में आसानी से जान सकते हैं।

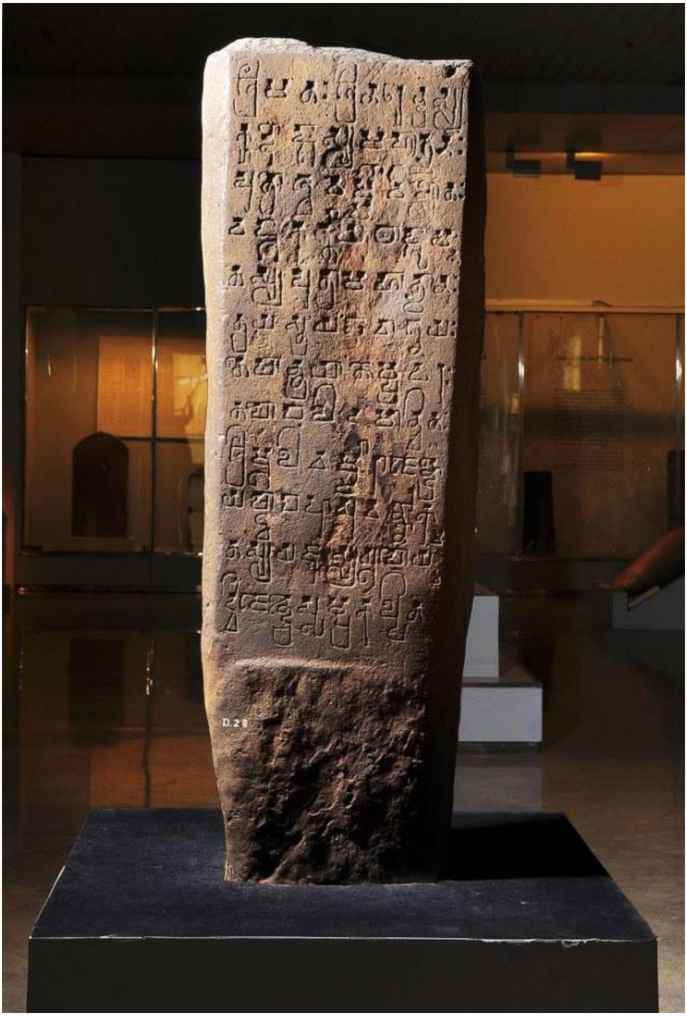


महाभारत में **भुसुण्डी तोपों** तथा कई अन्य उन्नत अस्त्र-शस्त्रों का उल्लेख मिलता है।
कुछ विद्वानों के अनुसार, ये अस्त्र आधुनिक प्रौद्योगिकी से मिलते-जुलते प्रतीत होते हैं, जैसे ब्रह्मास्त्र और दिव्यास्त्र।

विष्णु के 10वें अवतार **कल्कि** का उल्लेख महाभारत के वन पर्व में मिलता है।
कल्कि को विष्णु का अंतिम अवतार माना जाता है, जो कलियुग के अंत में अधर्म का नाश करेंगे और धर्म की पुनः स्थापना करेंगे।

महाभारत में केवल 12 प्रमुख योद्धा ही युद्ध के बाद जीवित बचे थे:
कृष्ण, अर्जुन, भीम, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, युयुत्सु, सात्यकि, कृतवर्मा, अश्वत्थामा, कृपाचार्य और वृषकेतु।

इंडोनेशिया की परंपरा में भी महाभारत का वर्णन मिलता है,
लेकिन वहां पात्रों के नाम थोड़े अलग हैं, जैसे:
कुंती (कुंतये), अर्जुन (अर्जुन्य), कृष्ण (वासुदेव), भीम (भीमाया), युधिष्ठिर (युधास्तर) आदि।



old Rock inscription)fig.6



(समुद्र की लहरों की हल्की आवाज़)

विजय:
"अविनाश, देखो... पूरा महाभारत एक जैसा लगता है, यहाँ तक कि रामायण भी वैसी ही है। लेकिन संस्कृति, परंपरा और लोग अलग हैं। इतिहास में ये फर्क कितना रोचक है ना?"

अविनाश:
(मुस्कुराते हुए)
"बिलकुल, विजय... यही तो इतिहास की खूबसूरती है।
वक्त बदलता है, पर कहानियाँ और उनके अर्थ कभी नहीं बदलते।"

विजय:
"लेकिन एक बात बताओ—इतिहासकारों ने कभी बताया कि द्वारिका कितनी बड़ी थी?"

अविनाशः
(थोड़ा आगे झुकते हुए)
"अच्छा... ध्यान से सुनो।
जब भगवान कृष्ण नगर बसाना चाहते थे,
तब महाराज रेवत—जो जूनागढ़ के राजा थे—
अपनी पुत्री रेवती का विवाह पहले ही बलराम से कर चुके थे।

उन्होंने दहेज में जो भूमि दी थी...
उसी भूमि की याद बलराम ने कृष्ण को दिलाई।

और फिर—
वहीं से शुरू हुई **द्वारिका की कहानी।**

एक ऐसा नगर...
जो जूनागढ़ से लेकर अरब सागर और खंभात की खाड़ी तक फैला हुआ था।"

(विजय की आंखों में उत्सुकता बढ़ने लगती है...)

अविनाशः
"आज भी समुद्र के नीचे जो अवशेष मिले हैं,
वे लगभग 5,500 साल पुराने माने जाते हैं।

इतिहास और महाभारत—दोनों जैसे एक-दूसरे की पुष्टि करते हैं।
सोचो... कितनी विशाल रही होगी वो नगरी!"

विजय:
“तो ‘द्वारिका’ नाम… इसका मतलब क्या है?”

अविनाश:
“द्वारिका—अर्थात *‘द्वारों का नगर’* या *‘स्वर्ग का प्रवेश द्वार’*।
एक ऐसी जगह… जहाँ से मानो किसी और ही लोक में प्रवेश होता हो।”

(कुछ पल के लिए दोनों चुप हो जाते हैं…)

विजय:
“और तुमने कहा था… 7 तलों वाली नगरी?”

अविनाश:
“हाँ… इसका मतलब है कि यह केवल एक शहर नहीं था,
बल्कि परतों में बसा हुआ इतिहास था।

इससे पहले यहाँ ‘कुशस्थल’ नाम का नगर था—
जिसे भगवान राम के पुत्र *कुश* ने बसाया था।

जब खुदाई हुई,
तो नीचे से 7,000 साल पुराना पत्थर मिला—
जो रामायण काल से मेल खाता है।”

विजय:
(हैरान होकर)
“मतलब… समुद्र के बीच पूरा शहर?”

अविनाश:
“बिलकुल।
और यही तो भारत के इतिहास को अद्‌भुत बनाता है—
जहाँ कल्पना और वास्तविकता के बीच की रेखा धुंधली हो जाती है।”

विजय:
(हंसते हुए)
“अब तो मुझे इतिहास पढ़ना ही पड़ेगा…
लेकिन तुम्हारे साथ—क्योंकि तुम्हारे साथ यह आसान और मजेदार है।”

अविनाश:
(हल्की हंसी के साथ)
“इतिहास सिर्फ पढ़ने की चीज़ नहीं है, विजय…
इसे महसूस करना पड़ता है।”

(थोड़ा रुककर…)

विजय:
“अच्छा, एक आखिरी सवाल—
द्वारिका को बनाया किसने?”

अविनाश:
“स्वयं *विश्वकर्मा* ने।
कृष्ण के आदेश पर—एक ऐसी नगरी बनाई गई
जो भव्य, सुव्यवस्थित और अद्भुत थी।

स्वर्ण महल, संगमरमर के स्तंभ, सुंदर उद्यान…
और एक विकसित बंदरगाह—जहाँ से व्यापार
और समुद्री यात्रा होती थी।

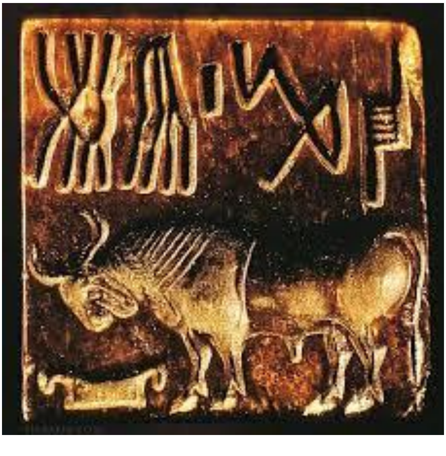
यह सिर्फ एक धार्मिक नगर नहीं था—
बल्कि एक समृद्ध *व्यापारिक और सांस्कृतिक केंद्र* भी था।”

विजय:
“और यह कैसे पता चला?”

अविनाश:
“समुद्र के नीचे मिले अवशेष…
जहाजों के चिन्ह, बंदरगाह के ढांचे,
और प्राचीन बर्तन—

ये सब बताते हैं कि द्वारिका एक जीवंत, समृद्ध
और उन्नत सभ्यता थी।”





(कुछ मोहरे जिस पर यूनिकॉर्न का चित्रण है)

अविनाश-   “दरअसल, इन मोहरों की कहानी बहुत दिलचस्प है, विजय…

कालीबंगा, हड़प्पा और लोथल जैसे प्राचीन स्थलों पर
ऐसी ही मोहरें मिली हैं—
जिन पर यूनिकॉर्न जैसा चिन्ह बना हुआ है।

शुरुआत में इतिहासकारों के बीच काफी मतभेद थे—
कि क्या ये वास्तव में द्वारिका से जुड़ी हुई हैं या नहीं।”

(विजय उत्सुकता से मोहर को हाथ में उठाता है…)

अविनाश:
“लेकिन बाद में, जब द्वारिका के समुद्री क्षेत्रों में खुदाई हुई,
तो ठीक ऐसी ही मोहरें वहाँ भी पाई गईं।

यही समानता…
एक बहुत बड़ा संकेत देती है—
कि इन सभी सभ्यताओं के बीच कोई न कोई गहरा संबंध जरूर था।”

विजयः
“मतलब… ये सिर्फ संयोग नहीं हो सकता?”

अविनाशः
“बिलकुल नहीं।
इतिहासकारों का मानना है कि यह संबंध मुख्य रूप से **व्यापार** के कारण था।

लोथल, जो एक प्रमुख बंदरगाह था,
वहाँ से समुद्री व्यापार होता था—
और संभव है कि द्वारिका भी इसी व्यापारिक नेटवर्क का हिस्सा रही हो।”

(अविनाश थोड़ी देर रुककर मोहर की ओर इशारा करता है…)

अविनाशः
“और ये यूनिकॉर्न का चिन्ह…
आज भी एक रहस्य बना हुआ है।
कुछ लोग इसे धार्मिक प्रतीक मानते हैं,
तो कुछ इसे व्यापारिक पहचान या *seal of authority* कहते हैं।”

8

युद्ध भूमि में श्री कृष्णा बलराम के बीच की बातचीत

यह घटना उस समय की है जब कृष्ण और बलराम ने जरासंध के खिलाफ युद्ध की तैयारी की।

युद्ध के बीच, बलराम कृष्ण की ओर देखते हैं और धीरे से कहते हैं—

“कान्हा, हम जानते हैं कि यह लड़ाई हमारी जीत में समाप्त होगी।

लेकिन मैं सोच रहा हूँ… यह आदमी—जरासंध—पहले सत्रह बार हमला कर चुका है, और अब फिर अपनी विशाल सेना के साथ आया है।

मुझे यह जानना है कि हमें उसे समाप्त करना चाहिए या किसी अन्य द्वारा भेजना चाहिए?”

कृष्ण मुस्कुराते हैं और बड़े भाई की तरह बलराम की कंधे पर हाथ रखते हुए कहते हैं—

“दाऊ, हमने बचपन से ही साथ बिताया है—कभी मामा कंस का नाश किया, कभी माखन चोरी किया, यमुना किनारे गोपियों की मटकी फोड़ी…

आने वाले युग में प्रजा हमें वीर योद्धा और अटूट भाई के रूप में याद करेगी।

तुम मेरे लिए हमेशा छोटे भाई बने रहे, और तुम्हारा प्रेम मेरे लिए कभी कम नहीं हुआ।

तुम्हारे लिए सम्मान और स्नेह जीवन भर बढ़ता रहेगा।"

बलराम, जो कभी भावुक नहीं होते,

कृष्ण की बातों में जैसे अपने छोटे भाई के लिए प्यार को महसूस करने लगते हैं।

"अरे कान्हा, बस कर अब, इतना मक्खन मत लगाओ," वे हँसते हैं।

कृष्ण खिलखिलाते हैं—"दाऊ, माखन का स्वाद अलग नहीं, लेकिन मिश्री की मिठास जरूर जोड़ रहा हूँ।"

युद्ध का माहौल दोनों के लिए कुछ पल के लिए शांत हो जाता है।

रथ पास-पास खड़े होते हैं, और कृष्ण हल्के स्वर में याद करते हैं—

“बल दाऊ, मुझे बचपन में हमारे खेल याद आते हैं।

तुम्हारे पास इतनी गोपियाँ क्यों थीं?”

बलराम जल्दी-जल्दी बोलते हैं—“अरे लल्ला, मेरे पास इसलिए नहीं कि मैं गोरा था, बल्कि क्योंकि तुम गोपियों को जितना पसंद करते और मटकी फोड़ते, उनकी नजरें हमेशा तुम्हारे पीछे रहतीं।”

कृष्ण की आँखों में गोकुल की यादें उमड़ आती हैं।

धीमी आवाज़ में निकलता है—“काश, मैं एक दिन माँ यशोदा की गोदी में सर रखकर सो पाता, बाबा नंद के साथ भोजन कर पाता, हमारी प्यारी गायों को यमुना किनारे ले जाता, और वही बचपन के खेल फिर से खेल पाता।”

बलराम सिर हिलाते हैं—“सच, कान्हा, मुझे भी याद आती है।

लेकिन हमें जल्दी मथुरा से रवाना होना है।

हमारे लोगों की सुरक्षा के लिए, हमें सही भूमि की आवश्यकता है।”

कृष्ण शांत होते हैं—“तो तुम्हारा मतलब है कि हमें सुरक्षित भूमि पर जाना चाहिए।”

बलराम मुस्कुराते हैं—“फिक्र मत करो। जब मेरी शादी हुई थी, तब महाराज रेवत ने हमें भूमि दहेज में दी थी।

शायद अब समय आ गया है।”

कृष्ण के चेहरे पर थोड़ी राहत दिखती है।

“जूनागढ़ की भूमि…”

बलराम हँसते हैं—“हाँ कान्हा, वही।”

तभी युद्ध का शोर बढ़ता है।

कुच शस्त्र बलराम और कृष्ण की ओर बढ़ते हैं,

लेकिन बलराम उसे रोकते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि जरासंध का शस्त्र सबसे बड़ा खतरा है।

जब युद्ध का समय आया, कृष्ण बलराम से कहते हैं—

“जरासंध ने हमें चुनौती दी है, लेकिन यह निर्णय तुम्हारा है।

क्या तुम उसे समाप्त करना चाहते हो, या किसी और को भेजना चाहोगे?”

बलराम ने भीम का चयन किया, क्योंकि उन्होंने भीम को कुश्ती और शस्त्र विद्या सिखाई थी।

भीम ने बलराम के निर्णय का सम्मान किया और युद्धभूमि में प्रवेश किया।

पुराण में वर्णित है कि भीम और जरासंध का युद्ध 27 दिनों तक चला,

और अंतिम दिन, कृष्ण अपने पैर पर हाथ रखकर भीम को संकेत देते हैं—

जहाँ प्रहार करना है। भीम संकेत को समझता है और अंत में जरासंध को समाप्त कर देता है।

कृष्ण ने विपरीत दिशा से हमला करने का संकेत दिया,

क्योंकि जरासंध किसी भी परिस्थिति में स्वयं को सुरक्षित मानता था।

बलराम ने भीम को कुश्ती और शस्त्र विद्या सिखाई थी,

ताकि जरासंध और उसकी सेना को सुरक्षित रूप से समाप्त किया जा सके।

यही कहानी है—भाईपन, रणनीति और युद्ध की दिव्यता का संगम।

9

केशवी और विजय को . अलविदा

बस धीमी-धीमी गति से रुक रही थी। केशवी अभी-अभी नींद से उठी और मेरी ओर देखने लगी। उसकी छोटी सी आंखें

अभी भी थोड़ी भारी थीं, लेकिन जिज्ञासा में चमक रही थीं।

केशवी: "क्या हम द्वारिका पहुंच गए हैं?"

मैं मुस्कुराया और खिड़की की ओर इशारा किया।

"हाँ, देखो बाहर।"

पहली बार केशवी ने समुद्र को देखा। उसकी आँखें फैल गईं, चेहरे पर एक बड़ी, मासूम मुस्कान खिल गई। वो खिड़की के पास झुककर बाहर की ओर उत्सुकता से झाँकने लगी।

मैंने धीरे-धीरे विजय और केशवी की ओर देखा। विजय ने मुझे गले लगा लिया। केशवी, अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से मुझसे देख रही थी। मैं उसकी आँखों में हल्के आँसू देख सकता था।

धीरे से मैंने उसे उठाया और कहा,

“तुम मेरे जीवन की सबसे खूबसूरत याद हो।”

वो रोते हुए मुझसे कसकर लिपट गई। उसका छोटा शरीर मेरे सीने से जुड़ा हुआ था, और मैं खुद भी भावुक हो गया। उसकी मासूमियत, उसकी मुस्कान—अब थोड़ी डरती और भावुक हो गई थी, मानो मुझे खोना नहीं चाहती।

मैंने उसके माथे पर हल्का सा चुम्बन दिया और प्यार से कहा,

“मैं वापस आऊँगा तुम्हारे पास।”

केशवी (रोते हुए): “तुम झूठ बोल रहे हो, तुम नहीं आओगे।”

अविनाश: “मैं आऊँगा… लेकिन मेरी एक शर्त है।”

केशवी (हिचकिचाते हुए): “क्या?”

अविनाश (धीमी आवाज़ में): “तुम बहुत अच्छी पढ़ाई करोगी… या हाँ, तुम्हें पता है क्या बनना है।”

केशवी: “हाँ… इतिहासकार… आपके जैसे।”

अविनाश (मुस्कुराते हुए, लेकिन भावुक स्वर में): “मुझसे भी अच्छी।”

मैंने अपने बैग से किताब निकाली और उसके हाथ में दी—“The Discovery of Dwarika”।

जब उसने किताब देखी, उसकी खुशी चेहरे पर झलक रही थी, उसकी आंखों में चमक और मुस्कान के मिश्रण ने माहौल को रोशन कर दिया।

अब अलविदा कहने का समय आ गया। मैं पीछे मुड़ा और देखा, विजय और केशवी मुझे हाथ हिला रहे थे।

केशवी: “अविनाश! मिलेंगे ना हम वापस?”

उसकी आवाज़ में हल्का डर और उम्मीद दोनों था।

मैंने मुस्कुराते हुए हाथ हिलाया,

“हाँ, जरूर… हम मिलेंगे।”

लेकिन अंदर मन में कुछ हल्की पीड़ा थी—
शायद, सच में हम फिर कभी नहीं मिलेंगे।

केशवी (धीमे से, रोते हुए): “तुम सबसे अच्छे हो।”

वह सच में परेशान और भावुक दिख रही थी।

“मैं जा रही हूँ… तुम्हारी कहानियाँ याद आएंगी।”

मैं मुस्कराया और धीरे कहा,

“चिंता मत करो, मैं इन खूबसूरत यादों को हमेशा अपने पास रखूंगा।”

विजय ने मेरी ओर देखा और कहा,

“आप अच्छे इंसान हैं… और मैं चाहता हूँ कि हम किसी दिन फिर मिलें।”

मैंने मुस्कुराते हुए कहा,

“ज़रूर भाई… हम किसी दिन फिर मिलेंगे।”

वे धीरे-धीरे अपनी राह पर बढ़ गए।

मैं खिड़की से बाहर देख रहा था—समुद्र की लहरें और दूर क्षितिज, जहां उनका सिल्हूट धीरे-धीरे मिटता जा रहा था।

सिर्फ हवाओं की सरसराहट और मेरी धड़कन के बीच, यह अलविदा एक अमर पल बन गया।

10

द्वारिका तट पर सूर्यास्त का नजारा

मैंने अपनी घड़ी देखी और समय 4:30 बजे थे, मैं द्वारिका समुद्र तट पर गया, मैं अपने सामने एक सुंदर सूर्यास्त देख सकता था, मैंने एक लंबी सांस ली, पानी आया और मेरे पैर को छू गया, मैं द्वारिकाधीश मुख्य मंदिर को स्पष्ट रूप से देख सकता था, मैं समुद्र तट पर अकेले दर्शन कर रहा था, मंदिर को देखने के बाद अचानक मैं रोने लगा, मैं अपने आप को नहीं रोक सका। यहां तक कि मैं उन मुश्किल चीजों के बारे में रोना चाहता हूं, जिन्हें मैं बाहर निकालना चाहता हूं

मेरे किनारे कर समुद्र को देख सकता था वहा पर सूरज जो कुछ समय में ओजल होने वाला था अचानक से मैं अपने आप को रोने से रोक नहीं पाया इतने सालो में ये पहली बार था जब मेरी आंखों से आसु निकल रहे थे कुछ लहरों के बुंदे मेरे चेहरा पर एकर लगी मानो के राही हो तेरे मन में जो यहां लहर का साथ छोड़ कर जा या अपना मन हल्का कर ले

मंदिर की मधुर गांठियों की आवाज मेरे कानों में गूंज रही थी जो काफी मुझे मेरे मन को शांति दे रही है,

एक प्यारी हवा मेरे बालों को मेरे चेहरे पर ले आई

अपने बैग से मैंने एक किताब निकाली या उसमें एक आखिरी लाइन लिखी

मैने अपना वादा पूरा किया

30 जनवरी 2018 !

उस दिन वो शादी के जोड़े में बेहद प्यारी लग रही थी।

पास जाकर देखने का मन था, लेकिन उस दिन मेरे पास हिम्मत नाम की कोई चीज़ नहीं बची थी। अब वो किसी और की होने ही जा रही थी।
मैं कुछ दूरी से उसे विवाह के पथ पर चलते देख रहा था। अंदर उठ रही भावनाओं की लहरों को मैंने खुद ही शांत रखा, सिर्फ़ एक छोटी सी मुस्कान दे पाया दूर से।
मेरे पास उसके लिए दुआ माँगने के सिवा कोई रास्ता नहीं था—और वह कंगन था, जो उसने मुझसे सालों पहले दिया था, जिसे मैंने बहुत

संभालकर रखा था।
शायद उसे पता भी नहीं कि मैं उसकी शादी के फेरे दूर से ही देख रहा था। यह सोचकर मन काफी भारी था कि शायद आज मेरी उससे आखिरी मुलाकात है।
दुआ में लिप्त, मैं यह सोचकर निकल पड़ा कि हमें शायद फिर कभी मिलने का नसीब ही न हो।

ख़ुद से आज कुछ नफ़रत सी हो रही थी।

मन कर रहा था कि मैं वाकई इस चीज़ को मान ही नहीं रहा—जाते-जाते आँखों में समुद्र की बूंदे समा चुकी थीं; मैं उसे रोक ही नहीं पाया।
गाड़ी के पास जाकर—हड़बड़ी में—मैंने उसे चला दिया और थोड़ा दूर निकल आया था।
बारिश और मेरे आँसू साथ-साथ बह रहे थे। उन बूंदों में जैसे मेरे आँसू कह रहे हों, "आज मैं काफ़ी अकेला हो चुका हूँ, मुझे किसी नए समुंद्र में बहा दो।"
मैं खुद को रोक नहीं पा रहा था और समझ नहीं आ रहा था कि कैसे बर्ताव करूँ। पास की एक दुकान से सिगरेट ली, लेकिन जल्दबाज़ी में हाथ से गिर गई। वहाँ खड़े लोग शायद मुझे समझ ही नहीं पाए, मेरे व्यवहार को,सिगरेट का एक कश मैंने अंदर ली—और ठंडी हवा ने उस अंदर भड़की आग को बुझा दिया।

मेरे सीने में आज एक सोच थी—“वो अब मेरी नहीं, वो जा चुकी है”—मैं चाहकर भी उसे रोक न पाया...

मैं उस आग से दूर जाना चाहता था।

उस शहर से दूर।

उस जगह से दूर।

और सबसे ज़्यादा—अपने आप की तलाश में।

मुझे पता था कि मुझे कहाँ जाना है।

कुछ दिनों बाद मैं अहमदाबाद पहुँच गया। अपने मित्र गौरव के पास रुका। वह मुझे देखकर सब समझ चुका था—मेरी चुप्पी, मेरी आँखें, मेरा बोझ। उसने बस इतना कहा, “जहाँ मन लगे, वहाँ चले जाओ। तुम्हें कोई नहीं रोकेगा।” और मैं अहमदाबाद से द्वारिका की ओर निकल पड़ा। मुझे ज़रा भी अंदाज़ा नहीं था कि यह सफ़र मुझे सिर्फ़ अपने आप से नहीं, बल्कि एक मासूम बच्ची से भी मिलवाएगा—जो मुझे ऐसे सवालों के सामने खड़ा कर देगी, जिनके जवाब मैं खुद से छुपाता आया था। सच ही है, कुछ चीज़ें हमेशा अनकही रह जाती हैं।

इन्हीं विचारों में डूबा मैं समुद्र के तट पर बैठा था। बहुत कोमल, ठंडी हवाएँ आकर मुझे छू रही थीं। उन हवाओं में द्वारिका मंदिर की एक अलग-सी महक थी—जिसे मैं साफ़ महसूस कर पा रहा था। लहरें मेरे पैरों को छू रही थीं, मानो मुझे संभाल रही हों। मैंने अपने हाथों से वह कंगन निकाला, जो लाल रुमाल में लिपटा हुआ था, और उसे लहरों में बहा दिया। उस कंगन पर "कुन्नु" लिखा था—वही कंगन, जो उसने कभी मुझे दिया था, और जो हर बार मुझे यह याद दिलाता था कि "मैं हमेशा तुम्हारे साथ रहूँगी।"

पर ऐसा नहीं हुआ।

मन में एक नई ऊर्जा भरकर मैंने उसे लहरों के हवाले कर दिया। कुछ देर तक घुटनों के बल बैठा, लहरों को उसे अपने साथ ले जाते हुए देखता रहा। एक लंबी साँस ली। सूरज अब पूरी तरह ओझल हो चुका था, बस उसकी लालिमा आसमान में बची थी। मन के बहुत-से सवाल अब ख़त्म हो चुके थे। ठंडी हवाएँ, लहरें, और पीछे से आती मंदिर की आवाज़ें—जहाँ दूर से ही भक्तगण द्वारिकाधीश का गुणगान कर रहे थे—सब कुछ एक साथ हो रहा था। पहली बार मन को इतनी शांति मिली थी।

मैं उठा और मंदिर की ओर बढ़ा। आरती का समय होने वाला था। मंदिर में प्रवेश करते ही अगरबत्तियों की खुशबू से पूरा प्रांगण महक रहा था। जैसे ही भीतर गया, ऐसा लगा मानो अंदर कोई सकारात्मक ऊर्जा भर गई हो। और जब

पहली बार मैंने द्वारिकाधीश को देखा—मेरा मन किसी छोटे बच्चे की तरह रोने लगा। मैं खुद को रोक नहीं पाया। बस रोते हुए "जय द्वारिकाधीश" कहता रहा। वह क्षण मेरे जीवन का सबसे प्यारा क्षण था। मेरे देव मेरे सामने विराजमान थे। मन था कि वहीं रुक जाऊँ, लेकिन श्रद्धालुओं की भीड़ मुझे आगे बढ़ा ले गई।

मैं बाहर आकर आँगन में बैठ गया। सामने 52 गज की ध्वजा लहरा रही थी। मैंने आँखें बंद कर लीं और खुद को खो दिया—इस अनुभूति में कि मेरे द्वारिकाधीश यहीं हैं, मेरे पास बैठे हैं। कुछ देर बाद बलराम दाऊ के मंदिर में गया। उनके पास बैठकर मन की सारी बातें कह दीं। उनकी आँखें मानो बहुत कुछ कह रही थीं। हर क्षण, हर पल—यह सब मेरे जीवन के सबसे सुंदर पल थे।

मैं फिर बाहर आया और द्वारिकाधीश मंदिर के आँगन में बैठकर आरती देखी। वह आरती… वह क्षण… बहुत कुछ कह रहा था। ऊपर चंद्रमा था—मानो एक मुकुट बनकर इस दृश्य को पूर्ण कर रहा हो। बहुत देर तक बैठा रहा। फिर अपने द्वार की ओर बढ़ा। जाने से पहले आख़िरी बार पीछे मुड़ा। आँखें बंद कीं… और बस उन्हें याद किया।

रात के **नौ बज चुके थे**।
मैं यमुना तट पर बैठा था।

हल्की-हल्की ठंडी हवा मेरे बालों को बिखेर रही थी,

और मैं सामने स्थित **द्वारिकाधीश मंदिर** को प्रेमपूर्वक निहार रहा था।

वह पल…
शायद जीवनभर मेरे साथ रहने वाला था।

मेरी आँखों में आँसू थे—
बिना किसी कारण के नहीं,
बल्कि उन भावनाओं के कारण,
जो शब्दों में बयां नहीं हो सकती थीं।

तभी एक वृद्धा मेरे पास आकर रुकी।
उन्होंने मुझे देखा…
और हल्की-सी मुस्कान के साथ मेरे पास बैठ गईं।

अम्मा (मृदु स्वर में):
"उदास चेहरा द्वारिका नगरी में अच्छा नहीं लगता, बेटा…"

मैंने भी हल्की-सी मुस्कान के साथ उनकी ओर देखा।
उनकी आँखों में एक अजीब-सी चमक थी—
मानो कोई दिव्य शक्ति मेरे सामने आकर बैठ गई हो।

उनकी उम्र साठ वर्ष से अधिक रही होगी,
लेकिन चेहरे पर एक भी झुर्री नहीं थी—
अद्भुत तेज और शांति थी उनमें।

मैं:
"अम्मा, उदास नहीं हूँ…
बस यह सब देखकर मन भर आया है।
कुछ भावनाएँ हैं… जो रुक नहीं रही।"

हम दोनों के बीच बातचीत चलती रही।
पीछे मंदिर से **द्वारिकाधीश के भजन** गूंज रहे थे—
वातावरण और भी अलौकिक हो चुका था।

अम्मा:
"ये सब जीवनभर की यादें हैं, बेटा…
इन्हें संभालकर रखना।

यहाँ कोई अपनी इच्छा से नहीं आता—
द्वारिकाधीश जब बुलाते हैं, तभी कोई यहाँ पहुँचता है।
तुम्हारा यहाँ होना… तुम्हारा सौभाग्य है।"

मैं चुपचाप सुनता रहा…

अम्मा (आगे कहती हैं):
“जिसे तुम अपना मानते हो,
वह शायद कभी तुम्हारा था ही नहीं…

और जो तुम्हारी किस्मत में है,
वह सही समय पर ही मिलेगा।

यह सब… माया है, बेटा।
जितना तुम इससे दूर भागोगे,
यह उतना ही तुम्हें अपनी ओर खींचेगी।”

मैंने धीमे से पूछा—
“तो क्या इससे बचने का कोई तरीका नहीं है?”

अम्मा मुस्कुराईं…

“हमने मनुष्य जन्म लिया है।
और मनुष्य की प्रकृति ही है—
हमेशा कुछ और खोजते रहना।

सिर्फ तुम ही नहीं…
हर कोई इसी तलाश में है।”

मैं निरुत्तर था।
उनकी बातों का कोई जवाब मेरे पास नहीं था।

तट का ठंडा पानी मेरे पैरों को छू रहा था,
और हवाएँ अब भी बह रही थीं…

कुछ देर बाद मैंने पूछा—
“अम्मा, आपका नाम?”

उन्होंने मधुर स्वर में कहा—
“रुक्मी…”

मैं मुस्कुराया—
“बहुत सुंदर नाम है आपका।”

फिर मैंने पूछा—
“अम्मा, कुछ खाएँगी?”

उन्होंने कहा—
“हाँ बेटा, भूख तो है…
जा, अपने मन से कुछ ले आ।”

मैं तुरंत उठा और पास से कुछ खाने की चीज़ें लेकर वापस आया।

लेकिन…

वहाँ कोई नहीं था।

सिर्फ एक छोटी-सी **पोटली** वहीं रखी हुई थी।

मैंने चारों ओर देखा…
उन्हें हर जगह खोजा…
पर अम्मा कहीं नहीं मिलीं।

मैं कुछ देर वहीं खड़ा रहा—
उम्मीद करता रहा कि शायद वो वापस आ जाएँ।

लेकिन समय बीतता गया…
नौ से ग्यारह बज गए…

अब यह स्पष्ट हो चुका था—
वो नहीं आने वाली थीं।

मैंने उनकी पोटली उठाई,
यह सोचकर कि सुबह उन्हें ढूंढकर वापस कर दूँगा।

और फिर…
धीरे-धीरे अपने होटल की ओर बढ़ गया—
लेकिन इस बार,
मेरे साथ सिर्फ वह पोटली नहीं थी…
बल्कि एक रहस्य,
और कुछ अधूरे सवाल भी थे।

11
अंतिम अनुभूति

मैं पैदल चलकर 11 बजे अपने होटल के पास वापस आया, मैंने देखा कि 2 सुंदर गायें पीछे से आ रही हैं, उनके गले में घंटी की आवाज मुझे और अधिक आराम दे रही है, द्वारिका वास्तव में अब तक की सबसे सुंदर जगह है, अचानक मुझे ध्यान आया कि एक गाय थी जिसे मैंने पहले देखा था, लेकिन मुझे स्पष्ट रूप से याद नहीं आ रहा है, अचानक मुझे याद आया कि ये गाय मैंने तब देखी थी जब मैं सुबह अहमदाबद से द्वारिका आ रहा था, उसी रंग की एक सुंदर पायल उसके पैर में थी, लेकिन मैं हैरान था कि ऐसा कैसे हो सकता है?

मुझे मन में लगा, शायद यह कोई मिथक हो या फिर मेरी ही अधिक कल्पनाएँ हों।

मैं अपने होटल के कमरे में पहुँचा। कमरे की खिड़की से द्वारिकाधीश मंदिर स्पष्ट दिखाई दे रहा था। मैं कुछ देर खिड़की के पास खड़ा रहा। रात का वातावरण अत्यंत शांत हो चुका था, बस समुद्र की लहरें थीं जो मानो कुछ कहना चाहती हों।

मैं अपने पूरे सफ़र के बारे में सोचते-सोचते गहरी विचार-मग्नता में डूब गया। मेरा यह यात्रा-क्रम

अब समाप्ति की ओर था। तभी अचानक मुझे उस बूढ़ी अम्मा की पोटली याद आई, जिसे मैंने मेज़ पर रख दिया था। मैंने सोचा, यदि सुबह वे मुझे फिर मिलीं तो यह पोटली लौटा दूँगा।

मैं पोटली को उसकी सही जगह रखने गया ही था कि अचानक वह मेरे हाथ से छूटकर नीचे गिर गई। उसके भीतर से लोहे जैसी एक आवाज़ आई और घूमती हुई पोटली से बाहर निकलकर वह वस्तु सीधे मेरे पैरों के पास आ गिरी।

मैं सन्न रह गया और तुरंत बिस्तर के कोने पर बैठ गया, क्योंकि वह लोहे की वस्तु और कुछ नहीं बल्कि वही कड़ा था, जिसे मैंने स्वयं समुद्र में प्रवाहित कर दिया था।

मेरे काँपते हाथ फिर से उस कड़े की ओर बढ़े। मैंने उसे उठाया। उस पर वही साफ अक्षरों में “कुन्नु” लिखा हुआ था। मेरा मन अभी शांत ही हुआ था कि एक साथ अनेक प्रश्न खड़े हो गए। मेरी आँखें धुँधली होने लगीं, आँसू फिर से बहने लगे।

मैं समझ नहीं पा रहा था कि यह सब संभव कैसे है। जिससे मैं स्वयं को दूर करना चाहता था, वही मेरे पास लौट आया था।

मेरा मन उस पोटली को फिर से खोलने को हुआ। मैंने सारा सामान एक-एक कर बाहर निकाला। यह देखकर मैं स्तब्ध रह गया कि उसमें एक पुस्तक भी थी, जिस पर लिखा था — "रुक्मिणी ब्राह्मण"।

उस पुस्तक को देखते ही मुझे याद आया कि इसमें माता रुक्मिणी का वर्णन है — कि वे आज भी द्वारिका में अपने भक्तों को विभिन्न रूपों में दर्शन देती हैं, और संध्या समय गोमती तट पर विचरण करती हैं। द्वारिका की आरती के समय वे अपने पति में समा जाती हैं।

इन्हीं विचारों में डूबा था कि मेरी दृष्टि एक पायल पर पड़ी। यह वही पायल थी, जिसे मैंने आरती के समय द्वारिकाधीश के चरणों में देखा था, और

वही पायल उन गायों के पैरों में भी थी जिन्हें मैंने अपने यात्रा-क्रम के प्रारंभ में देखा था।

अब कई चित्र स्पष्ट होने लगे थे।

मैं अकेला होते हुए भी अकेला नहीं था। मेरे हर कदम पर मेरा ईश्वर मेरे साथ था।

मेरी बातों को सुनने वाली वह बूढ़ी अम्मा रुक्मी कोई और नहीं, स्वयं माता रुक्मिणी थीं।

इन सब बातों को मन में सोचते-सोचते मैं इतना उलझ गया कि यह सब कैसे संभव हो सकता है। मेरे सामने कड़ा, पुस्तक और पायल — तीनों एक साथ रखे थे।

तभी पीछे से एक गूँजती हुई आवाज़ आई —

“अश्वपति मेघपति गजपति नरपति, राजर्षि द्वारकाधीश श्रीकृष्ण”

यह आवाज़ मुख्य मंदिर से आ रही थी। लोग भजन-गान कर रहे थे।

यह सब केवल मेरा मन जानता है कि उस क्षण मुझे किसकी अनुभूति हो रही थी।

भगवान श्रीकृष्ण और माता रुक्मिणी मेरे सामने प्रत्यक्ष रूप में नहीं थे,

पर वे हर मोड़ पर, कहीं न कहीं, मेरे साथ चलते रहे।

वह कड़ा उसी स्थान पर वैसा ही रखा था।

अब मन में प्रश्न नहीं थे, बस यही था कि —

मेरी कहानी आखिर किस दिशा में जा रही है।

मैंने कड़े को हाथ में लिया और उन शब्दों को प्रेम से निहारता रहा।

“अभी मैं तुम्हारे लिए कुछ लाई हूँ।”

मैं मुस्कुराया,

मैं जानता हूँ।”

“कुन्नु…”

“पर मैंने तो कुछ बताया ही नहीं।”

मैंने कहा,

“या तो मेरी पसंदीदा किताबें होंगी,

या फिर कुछ ऐसा, जो तुम मुझे हमेशा के लिए देना चाहती हो।”

कुन्नु मुस्कुराई,

“हम्म… यूँ ही समझ लो। चलो, आँखें बंद करो।”

“ठीक है।”

उसने वह कड़ा मेरे हाथों में रख दिया।

मैंने आँखें खोलीं।

“मैं जानती हूँ,” उसने कहा,

“तुम सोच रहे हो कि इस कड़े में ऐसा क्या है।

इसे घुमाओ।”

मैंने कड़ा घुमाया।

उस पर उसका नाम था।

“जब भी तुम्हें लगे कि तुम्हें मेरी ज़रूरत है,

यह कड़ा तुम्हारे पास रहेगा।

और यह समझना कि —

कहीं न कहीं, मैं भी तुम्हारे पास ही हूँ।”

मैं उसे देखे जा रहा था,

मानो मुझे जीवन का सबसे अमूल्य उपहार मिल गया हो।

“सर… सर… गेट खोलिए, रूम क्लीनिंग।”

मेरी आँखें खुलीं।

सवेरा हो चुका था।

द्वारिका की गूँज फिर से कमरे में फैल रही थी।

मैंने जल्दी-जल्दी सारा सामान अपने बैग में रखा,

ताकि कुछ अजीब न लगे।

नहा कर बाहर आया।

मन हल्का था।

अजीब-सी शांति थी।

समय आ गया था विदा लेने का।

सारा सामान लेकर होटल से बाहर निकला ही था कि पीछे से आवाज़ आई—

“सर, आपका ये सामान रह गया है।”

वह सामान और कुछ नहीं, मेरा कड़ा था।

मैं मुस्कुराया और बड़े ध्यान से उसे हाथ में लेकर पहन लिया।

उस व्यक्ति ने पूछा,

“सर, ये बहुत सुंदर कड़ा है। किसी ने तोहफ़े में दिया है क्या?”

मैंने हँसते हुए कहा,

“मेरी बहुत अज़ीज़ मित्र ने।”

वह बोला,

“वाकई, बहुत प्यारा है।

और इस पर नाम तो और भी सुंदर लग रहा है।

ये किसी मित्र का नहीं… किसी अपने का निशान लगता है, है न सर?”

मैं मुस्कुराया,

“हाँ… मेरे अपने का।”

शायद वह समझ चुका था।

सहज भाव से बोला,

“प्रेमिका ने दिया है न?”

मैंने कुछ नहीं कहा।

मेरी बस आ चुकी थी — सोमनाथ की ओर।

होटल के उस कर्मचारी ने बिना कहे मेरा सामान बस में रख दिया।

यह उसका बड़प्पन था।

मैंने उसका नाम पूछा।

उसने कहा, “हरि।”

जैसा नाम, वैसा ही स्वभाव।

बस चलने ही वाली थी।

वह बाहर खड़ा होकर बोला—

“सर…

कुन्नु से कैसे मिले थे, ये तो बताइए…”

मैं मुस्कुराया,

“ज़रूर बताऊँगा।”

और तभी मेरी बस चल पड़ी….



चलती हुई बस में लेखक ने अपनी डायरी निकाली।

डायरी के पहले पन्ने पर उसने एक नए अध्याय का शीर्षक लिखा—

“द्वारिका चित्रंन — भाग 2”

फिर उसने डायरी बंद की और सामने रखी पुस्तक पर दृष्टि गई,

जिस पर लिखा था— वर्ष : 2014

लेखक अपने वर्तमान से निकलकर

अब अपने पुराने प्रेम और बीते वर्षों की स्मृतियों में पहुँच चुका था।

कहानी अभी थमी नहीं है...

बस एक मोड़ पर रुकी है।

अगले अध्याय में मिलते हैं, मित्रों...

....



आपका अविनाश

जय द्वारिकाधीश

स्रोत / संदर्भ

इस रचना में प्रयुक्त जानकारी निम्नलिखित ग्रंथों, पुस्तकों एवं आधिकारिक स्रोतों से संकलित की गई है—

1.कृष्ण कुंजि

2.श्रीमद्भगवद्गीता

3.श्रीकृष्ण और उनकी लीलाएँ

4.कृष्ण मानव और उनका दर्शन

5.ऐतिहासिक कृष्ण

6.विष्णु पुराण

7.प्राचीन भारत का इतिहास — उपिंदर सिंह

8.द्वारिका एवं सोमनाथ में जलमग्न पुरातात्विक अनुसंधान

9.सोमनाथ के द्वार

10.कृष्ण के अंतिम दिन

11.सोमनाथ का विवरण – गिर सोमनाथ, गुजरात सरकार की आधिकारिक वेबसाइट

12.द्वारिका का विवरण – देवभूमि द्वारिका जिला, गुजरात सरकार की आधिकारिक वेबसाइट

13.भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (Archaeological Survey of India – ASI)

14.द्वारिका की खोज से संबंधित पुरातात्विक अध्ययन

15.हड़प्पा सभ्यता से संबंधित शोध पत्र एवं अभिलेखीय कार्य

16.लोथल सभ्यता पर आधारित शोध पत्र एवं पुरातात्विक दस्तावेज़

17.ओखा एवं बेट द्वारिका से संबंधित पुरातात्विक शोध एवं अभिलेख